इकाई 15 रिपोर्ताज (एकलव्य के नोट्स)

इकाई की रूपरेखा

15.0 उद्देश्य
15.1 प्रस्तावना
15.2 रिपोर्ताज लेखन की विशेषताएँ
  15.2.1 कथात्मक प्रस्तुति
  15.2.2 ऐतिहासिकता
  15.2.3 चित्रात्मकता
  15.2.4 विश्वसनीयता
  15.2.5 शैली
15.3 रिपोर्ताज लेखन में रेणु की भूमिका
15.4 रिपोर्ताज 'एकलव्य के नोट्स' का पठन
15.5 'एकलव्य के नोट्स' का विश्लेषण
  15.5.1 प्रतिपाद्य
  15.5.2 भाषा-शैली
15.6 सारांश
15.7 शब्दावली
15.8 बोध प्रश्नों के उत्तर

15.0 उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के बाद आप :

- यह जान सकेंगे कि रिपोर्ताज किसे कहते हैं;
- इसमें रिपोर्ताज की प्रमुख विशेषताओं के बारे में चर्चा कर सकेंगे;
- हिन्दी में लिखे गए रिपोर्ताजों का संक्षिप्त परिचय दे सकेंगे; और
- उदाहरणों से इस रिपोर्ताज का रसास्वादन कर सकेंगे।

15.1 प्रस्तावना

'रिपोर्ताज' एक विदेशी शब्द है जिसे फ्रेंच भाषा से हिंदी में ले लिया गया है। किसी घटना को अपनी मानसिक छवि में ढालते हुए उसे प्रस्तुत कर देना या मूर्त रूप देना ही दरअसल रिपोर्ताज की प्रमुख विशेषता है। इस प्रकार किसी रिपोर्ट का कलात्मक और साहित्यिक रूप ही रिपोर्ताज है। घटना को ज्यों का त्यों प्रस्तुत कर देना तो सिर्फ रपट है। लेकिन उसी घटना को जब कोई पत्रकार या साहित्यकार अपनी भावना में रँगाकर बिम्बधर्मी भाषा के माध्यम से जीवंत बनाकर प्रस्तुत करता है तब उसे रिपोर्ताज कहते हैं। इस तरह रिपोर्ताज में कला और संवेदना की भूमिका महत्वपूर्ण होती है। रिपोर्ताज लिखने के लिए लेखक का अनुभव सिद्ध होना ज़रूरी है। कहने का तात्पर्य यह है कि लेखक के लिए घटना का प्रत्यक्षदर्शी होना आवश्यक है। घर में बैठकर कल्पना के सहारे किसी घटना को प्रस्तुत कर देना रिपोर्ताज नहीं कहा जा सकता। क्योंकि इसमें लेखक की प्रत्यक्ष अनुभूति ही कलात्मकता का आश्रय लेकर व्यक्ति-मन पर अपनी छाप छोड़ सकती है।

अचानक घटित होने वाली घटनाओं के साथ अर्थात् यूरोप के युद्ध क्षेत्र में इस विधा का जन्म हुआ। सन् 1936 के आस-पास इसका प्रादुर्भाव माना जाता है। इलिया एहरेनबर्ग के साथ -साथ अमेरिका के पैसोस, फ्रांस के आन्द्रे मैलरीज और इंग्लैंड के क्रिस्टोफर रिपोर्ताज लेखन के क्षेत्र में अपना महत्वपूर्ण स्थान रखते हैं। रूस की समाजवादी क्रांति पर जॉन रीड ने 'टेन डेज दैट शुक द वर्ल्ड' नाम से एक महत्वपूर्ण रिपोर्ताज लिखा है।

हिंदी में रिपोर्ताज लेखन की शुरुआत 1940 के आस-पास हुई। तब से लेकर आज तक इसका तेज़ी से विकास हुआ है। रांगेय राघव, प्रकाश चन्द्र गुप्त, अमृत राय, प्रभाकर माचवे, फणीश्वर नाथ रेणु, ठाकुर प्रसाद सिंह आदि ने महत्वपूर्ण एवं सशक्त रिपोर्ताज लिखे हैं। वे लड़ेंगे हज़ार साल (शिव सागर मिश्र), युद्ध यात्रा (धर्मवीर भारती), जुलूस रुका है (विवेकी राय), ऋणजल धनजल, नेपाली क्रांति कथा, श्रुत अश्रुत पूर्व (रेणु) आदि विशेष रूप से चर्चित रिपोर्ताज हैं। शिव सागर मिश्र के रिपोर्ताज 1965 में भारत-पाकिस्तान की लड़ाई पर आधारित हैं। धर्मवीर भारती ने सितम्बर 1971 में मुक्तिवाहिनी के साथ बांग्लादेश की गुप्त यात्रा की थी। भारतीय सेना के साथ वे भारत-पाक युद्ध के मोर्चे पर भी गए थे। रेणु का नेपाली क्रांति से गहरा संबंध रहा है। विवेकी राय ने आज़ादी के बाद बदलते हुए गाँव को नज़दीक से देखने की कोशिश की है।

रिपोर्ताज मुख्यतः रोमांचक, आतंककारी या भीषण घटना, युद्ध, अकाल, बाढ़, सूखा आदि पर आधारित होते हैं इसलिए वे निरंतर नहीं लिखे जाते। इससे मिलती-जुलती एक दूसरी विधा है फ़ीचर । फ़ीचर कभी भी किसी वस्तु या समय में लिखा जा सकता है अर्थात् किसी भी व्यक्ति, स्थिति या घटना को आधार बनाया जा सकता है। रिपोर्ताज और फ़ीचर दोनों का जन्म पत्रकारिता की कोख से हुआ है। रिपोर्ताज आज अपने कलात्मक रूप में हमारे सामने है। अब उसे शैली के रूप में उपन्यासों, संस्मरणों और आत्मकथाओं में प्रयुक्त किया जाने लगा है। फ़ीचर की दुनिया अभी उतनी विकसित नहीं हुई है और मुख्यतः पत्र-पत्रिकाओं तक ही सीमित है, जबकि रिपोर्ताज की स्वतंत्र पहचान एक गद्य विधा के रूप में बन चुकी है। रिपोर्ताज से मेल खाती एक विधा है रेखाचित्र, जहाँ लेखक अपने मन पर पड़े प्रभावों को पाठकों पर कम से कम लादता है। रेखाचित्र और रिपोर्ताज में अंतर को स्पष्ट करते हुए भगीरथ मिश्र ने लिखा है कि 'रिपोर्ताज किसी स्थान या घटना का यथार्थ, सजीव, मर्मस्पर्शी और संवेदना को उभारने वाला वर्णन होता है। इसमें घटना या दृश्य प्रधान रहता है चरित्र या व्यक्ति नहीं। परंतु शब्द चित्र में प्रधान चरित्र और व्यक्ति रहता है, घटना आदि पृष्ठभूमि के लिए ग्रहण की जाती है। यथार्थता की विश्वसनीयता, वैयक्तिक सम्पर्क की सजीवता और ऊष्मा तथा शैली की मर्मस्पर्शिता शब्द चित्र को लोक हृदय के संस्कार करने का अत्यंत प्रभावशाली माध्यम सिद्ध करती हैं। इसका कारण यह होता है कि हम अपने अनुभव से टकराए हुए व्यक्तियों को इसके बहाने अपने समक्ष प्रस्तुत पाते हैं।'

रेखाचित्र लेखक की अपेक्षा रिपोर्ताज लेखक को अधिक तटस्थ तथा मानसिक रूप से अधिक जागरूक रहकर काम करना पड़ता है। रेखाचित्र में कल्पना तथा कलात्मक अभिव्यक्ति के लिए गुंजाइश अधिक होती है, अतः उसमें रागात्मकता का गुण स्वाभाविक रूप से आ जाता है। रेखाचित्र से ही मिलती-जुलती विधा है संस्मरण। इसमें व्यक्ति जीवन के वे पहलू, संदर्भ और चारित्रिक विशेषताएँ अंकित की जाती हैं जो स्मरणकर्ता को याद रह जाती हैं। स्मरण वही रह जाता है जो आमतौर से विशिष्ट, विचित्र या प्रिय होता है। संस्मरण में विषय के साथ लेखक स्वयं भी अंकित होते चलता है। इसलिए इसमें लेखक तटस्थ नहीं रह पाता। बनारसीदास चतुर्वेदी के अनुसार 'संस्मरण, रेखाचित्र और आत्मचरित्र इन तीनों का एक दूसरे से इतना घनिष्ठ संबंध है कि एक की सीमा दूसरे से कहाँ मिलती है और कहाँ अलग हो जाती है इसका निर्णय करना कठिन है।' जिंदगी की बिखरी हुई जानी-अनजानी स्थितियों को सजीव करने की क्षमता रेखाचित्रों में अधिक है। संस्मरणों का संबंध मुख्यतः अतीत की स्मृतियों से है तो रेखाचित्र प्रायः वर्तमान को मूर्तरूप देते दिखाई पड़ते हैं। यथार्थ जीवन की धड़कन को रेखाचित्र में सही ढंग से पकड़ा जा सकता है। रिपोर्ताज का संबंध भी रेखाचित्र की भाँति वर्तमान से ही होता है। इसलिए यथार्थ की सशक्त अभिव्यक्ति की यहाँ भी पूरी गुंजाइश होती है।

'एकलव्य के नोट्स' सोद्देश्य रचना है और रेणु के रिपोर्ताजों में इसका अग्रणी स्थान है। वैसे तो यह 'परती परिकथा' के लिए लिखा गया नोट्स है जिसमें गाँव की समाजशास्त्रीय स्थिति का सूक्ष्म ब्यौरा पेश किया गया है। आज़ादी के बाद गाँवों में किस तरह के बदलाव आ रहे हैं? वे कितने सार्थक हैं? संबंधों के स्तर पर गाँव किस स्थिति में पहुँच गए हैं? और उसकी आत्मा किस तरह तिल-तिलकर मर रही है? ऐसे अनेक बिंदुओं और प्रश्नों को लेखक ने इस रिपोर्ताज में रेखांकित करने का प्रयास किया है। गाँव के विद्यालय की खस्ता हालत को समूचे ग्रामीण समाज की ढहती-चरमराती स्थिति के रूप में समझा जा सकता है। जातिवाद, दलबंदी, भ्रष्ट राजनीति, पंचायती राज की ध्वस्त होती अवधारणा, सामाजिक-आर्थिक विषमता, सवर्ण-दलित संबंधों के नए आयाम, दलित उभार, उनमें आत्म सम्मान की भावना का पैदा होना और जातिगत संघर्ष इस रिपोर्ताज में बहुत ही आत्मीय एवं निरपेक्ष ढंग से अभिव्यक्त हुए हैं। मानवीय संबंधों में इतने व्यापक पैमाने पर हो रहे बदलावों को इस छोटे से रिपोर्ताज में प्रभावशाली ढंग से बाँध दिया गया है। सम्पूर्ण राजनीतिक-आर्थिक परिवर्तनों के संदर्भ में मानवीय संबंधों की सच्चाई दिखाना ही इस रिपोर्ताज का मुख्य उद्देश्य है। संबंधों में इतना बदलाव, कि बेटा

अपने बाप पर विश्वास करने के लिए तैयार न हो, आश्चर्य में डालने वाला है। लेकिन यह सच है। इसमें दलित समुदाय की आंतरिक पीड़ा को सहानुभूतिपूर्वक व्यक्त किया गया है।

15.2 रिपोर्ताज लेखन की विशेषताएँ

15.2.1 कथात्मक प्रस्तुति

रिपोर्ताज में एक या उससे अधिक घटनाओं का चित्रण होता है। घटनाओं को कथात्मक रूप में प्रस्तुत करना इस विधा की एक प्रमुख विशेषता मानी जाती है। रिपोर्ताज में कोई न कोई कहानी अवश्य होती है। रिपोर्ताज को मर्मस्पर्शी बनाने में कथातत्व का योगदान महत्वपूर्ण होता है। ध्यान देने की बात यह है कि इसमें वर्णित कहानी वास्तविक तो होती है लेकिन वह न तो किसी समस्या को उठाती है और न ही कोई समाधान प्रस्तुत करती है। बल्कि वह एक ऐसा चित्र प्रस्तुत करती है जिसके द्वारा पाठक जीवन में चेतना भरने वाले मानवीय मूल्यों के संबंध में विचार करने लगता है।

15.2.2 ऐतिहासिकता

घटनाओं की प्रस्तुति द्वारा अपने युग के इतिहास को प्रस्तुत करने के कारण रिपोर्ताज का ऐतिहासिक महत्व भी कम नहीं है। इसमें किसी घटना के सामाजिक, आर्थिक व राजनीतिक आयामों को कलात्मक रूप में प्रस्तुत किया जाता है। रिपोर्ताज में वर्णित घटना स्वयं लेखक द्वारा देखी गई होती है इसलिए वह उस घटना के सभी पहलुओं से अच्छी तरह अवगत होता है। लेखक घटनाचक्र में फँसे व्यक्ति की वीरता, साहस और संकल्प की ऐसी तस्वीर प्रस्तुत करता है कि पाठक की संवेदना जाग उठती है। ऐसी घटना विशेष का सम्पूर्ण इतिहास रिपोर्ताज में निहित होता है, इसीलिए उसे अपने युग का जीवंत कलात्मक इतिहास माना जाता है।

15.2.3 चित्रात्मकता

चित्रात्मकता रिपोर्ताज की महत्वपूर्ण विशेषता है। इसी विशेषता के कारण रिपोर्ताज रेखाचित्र के निकट खड़ा हो जाता है। प्रभावपूर्ण चित्रों के रूप में छोटी-छोटी घटनाएँ आकार ग्रहण करती हैं और पाठक के मन में चित्र अंकित कर देती है। इस तरह समूची घटना चित्रपट की भाँति आँखों के सामने घूमने लगती है। भाव और संवेदना चित्रात्मकता को और अधिक सजीव एवं प्रभावशाली बना देते हैं।

15.2.4 विश्वसनीयता

घटनाओं का लेखक से साक्षात्कार होने के कारण रिपोर्ताज में विश्वसनीयता अधिक होती है। इसे प्रसंग-चित्र भी कहते हैं। किसी घटना, युद्ध, भूचाल अथवा मनोरंजक वृत्तांत का रिपोर्ताज तैयार करते समय लेखक का अपना दृष्टिकोण प्रधान रहता है। एक साधारण समाचार को कलात्मक रूप देने से रिपोर्ताज की सृष्टि होती है, यह बहुत ही रोचक तथ्य है। इसमें एक महत्वपूर्ण बात यह है कि पाठक को रचना (रिपोर्ताज) से वह संतुष्टि या आनंद मिलना चाहिए जिसे घटना को देखते समय लेखक ने खुद महसूस किया हो। ऐसी अनुभूति रिपोर्ताज को विश्वसनीय बनाती है। कहना न होगा कि लेखक की सहृदयता रिपोर्ताज को विश्वसनीय बनाने में महत्वपूर्ण भूमिका अदा करती है।

15.2.5 शैली

घटना की तत्कालीन प्रतिक्रिया के रूप में लिखे जाने कारण रिपोर्ताज की शैली सामान्यतः भावावेश-प्रधान होती है। इसके अलावा रिपोर्ताज निबंध शैली अथवा पत्र एवं डायरी शैलियों में भी लिखे जाते हैं। यह लेखक पर निर्भर करता है। जिस शैली में वह अपने को समर्थ रूप में अभिव्यक्त कर पाता है, उसी को वह अपना लेता है। असली चीज़ है घटना की प्रामाणिक और आत्मीय अभिव्यक्ति। इसके आकार की कोई सीमा नहीं होती। यह गद्यगीत की तरह छोटा भी हो सकता है और कहानी-उपन्यास की तरह बड़ा भी। लेखक की संवेदना का प्रसार ही इसकी सीमा का निर्धारण करता है। रिपोर्ताज में आत्मकथा की भाँति व्यक्ति के जीवन-संघर्ष की भावनात्मक प्रस्तुति नहीं मिलती। यह एक बहिर्मुखी विधा है जो वाह्य घटना पर आधारित होती है। इसकी सफलता परिस्थिति के सूक्ष्म अध्ययन एवं लेखकीय तल्लीनता में निहित रहती है।

बोध प्रश्न-1

1. ये रिपोर्ताज की प्रमुख विशेषताएँ हैं, इनकी संक्षेप में व्याख्या कीजिए।
   (क) कथात्मक प्रस्तुति

(ख) ऐतिहासिकता
(ग) चित्रात्मकता
(घ) विश्वसनीयता

2. निम्नलिखित वाक्यों को पूरा करें।
(क) रिपोर्ताज शब्द ..... से हिन्दी में लिया गया है।
(ख) रिपोर्ताज में ..... की महत्वपूर्ण भूमिका होती है।
(ग) हिन्दी में रिपोर्ताज लेखन की शुरुआत ..... के आस-पास हुई।
(घ) रिपोर्ताज मुख्यतः ..... आदि पर आधारित होते हैं।

15.3 रिपोर्ताज लेखन में रेणु की भूमिका

द्वितीय विश्व युद्ध के मलबे से रिपोर्ताज की उत्पत्ति मानते हुए भारत यायावर ने रेणु को हिंदी का पहला और सबसे बड़ा रिपोर्ताज लेखक माना है। लेकिन यह सच नहीं है। रेणु के पहले भी हिंदी में रिपोर्ताज लिखने वाले मौजूद थे। यह बात अलग है कि रेणु ने इस विधा को और ज्यादा समृद्ध किया। उन्होंने पहला रिपोर्ताज 'डायन कोसी' सन् 1947 में लिखा जो रामवृक्ष बेनीपुरी के सम्पादन में निकलने वाले साप्ताहिक 'जनता' में प्रकाशित हुआ और बाद में कई भाषाओं में अनूदित भी हुआ। उसके बाद उन्होंने जै गंगा, पुरानी कहानी : नया पाठ, एकटु आस्ते-आस्ते जैसे रिपोर्ताज लिखे। इस प्रकार उनके रिपोर्ताज लेखन की शुरुआत 1947 में हुई और 1965 से 1975 के बीच का समय उनके रिपोर्ताज लेखन का उत्कर्ष काल कहा जा सकता है। 1965 में अज्ञेय के सम्पादन में शुरू होने वाले 'दिनमान' में रेणु को बिहार का प्रतिनिधि बनाया गया। रेणु ने इस माध्यम का भरपूर उपयोग किया और समाज की उथल-पुथल या कि बदलावों को अपने रिपोर्ताजों में बहुत खूबी के साथ उभारा। हड़ताल, चुनाव, ग्रामदान, तस्करी, जिस्म फरोशी, अकाल और भूख पर रेणु ने जबर्दस्त रिपोर्ताज लिखे हैं। रेणु के रिपोर्ताज की सबसे बड़ी विशेषता यही है कि उसमें बिहार की राजनीतिक, सामाजिक एवं सांस्कृतिक चेतना पूरी तरह उपस्थित हो गई है। राजनीतिक नेताओं की पतनशीलता को रेणु ने बहुत गहराई से उभारा है। रेणु का रिपोर्ताज लेखन उनकी पत्रकारिता का एक प्रमुख हिस्सा था और तब यह कहना बेहद ज़रूरी हो जाता है कि पत्रकारिता रेणु के लिए मानवीय प्रवृत्तियों और उसकी संवेदना को संचित और उजागर करने का एक माध्यम थी। वे पत्रकारिता को जनपक्षधरता से जोड़कर देखते थे। इसलिए उनके रिपोर्ताजों में पाठक को बेचैन करने की ताकत है। रेणु ने अपने सारे रिपोर्ताज पत्र-पत्रिकाओं के लिए ही लिखे। उनके जितने रिपोर्ताज शायद ही अन्य किसी लेखक ने लिखे हों। 'ऋणजल धनजल', 'नेपाली क्रांति कथा', 'एकांकी के दृश्य' और 'श्रुत-अश्रुत पूर्व' में उनके अधिकांश रेखाचित्र संगृहीत हैं।

राजनीति और पत्रकारिता से रेणु का संबंध शुरू से ही रहा है। उन्होंने न केवल 'नई दिशा नया कदम' का सम्पादन किया, बल्कि दो वर्षों तक 'दिनमान' के बिहार प्रतिनिधि भी रहे। पत्रकारिता ने उनको रिपोर्ताज लिखने का मौका दिया और एक अलग तेवर भी। रेणु अपने रिपोर्ताजों में पठनीयता, रुचि और नवीनता के साथ कौतूहल का भी विशेष ध्यान रखते थे। शायद इसीलिए उनके रिपोर्ताज सहज ही लोगों का ध्यान आकर्षित कर लेते हैं।

रेणु उन बातों को रिपोर्ताज में प्रायः जगह नहीं देते थे जिसके बारे में लोग पहले से ही बहुत ज्यादा जानते होते थे। उन्होंने रिपोर्ताज को इतिहास, समाज और राजनीति का दस्तावेज बना दिया। मन बंजर धरती को देखकर दुखी हो जाता है। किसानों के जीवन-संघर्ष को रेणु इन शब्दों में रेखांकित करते हैं :

> 'खेतों में काम करने वालों के हाथ रुके नहीं। एक आदमी हमारे पास आया, हाथ की मिट्टी झाड़ता हुआ। हमें देखकर मुस्कराया। फिर पूछा, 'क्या देखने आए हो? यह सूखा? ऐसा कभी नहीं हुआ, लेकिन, हम लोग लड़ रहे हैं। थोड़ा-सा पानी पड़ा है और बाकी कूप-कुआँ से, जहाँ तक हो सके आदमी रहते तो हिम्मत नहीं हारेगा।'

भारतीय किसान में विकट जिजीविषा* और सहनशीलता पाई जाती है। विकट परिस्थितियों में भी वह धीरज के साथ रह लेता है। ऐसे किसान से रेणु पूरी सहानुभूति रखते हैं। वे एक पत्रकार के रूप में साम्प्रदायिक शक्तियों को बेनकाब करने से नहीं हिचकते। 'यह सही है कि राज्य सरकार बाढ़ से लेकर भूख तक की समस्याओं का समाधान करने में असमर्थ रही लेकिन शांतिपूर्ण आंदोलन को आक्रामक रूप देने में किसी भयानक सुनियोजित षड्यंत्र की ही पुष्टि होती है। जाँच से भी ऐसे ही तथ्य सामने

आए हैं कि इसके पीछे पाक परस्तों और वामपंथियों का ही हाथ रहा है।' इस बात की तनिक चिंता किए बगैर, कि लोग उन्हें प्रतिक्रियावादी कह सकते हैं, उन्होंने लिखा है कि - 'अन्य प्रदेशों की तरह बिहार में भी किसी जमाने के कट्टर लीगी खद्दरधारी कांग्रेसियों के रूप में विद्यमान हैं। वे राष्ट्र का हित सोचकर राष्ट्रवादी मुसलमानों को भी बहकाने और बरगलाने की कोशिश चोरी छिपे करते हैं ।' तत्कालीन इतिहास के महत्वपूर्ण क्षणों को रेणु ने बहुत सफलतापूर्वक बाँधने की कोशिश की है। वे निश्चय ही अपने समय और समाज की नब्ज को पहचानते थे इसीलिए वे कभी-कभी इतिहास के रचयिता भी लगते हैं।

रेणु अपने रिपोर्ताजों में किसी सीमा को नहीं स्वीकारते। जंगल, पहाड़, नदी, घाटी, मैदान, निर्धनता, बेकारी, भूख, बीमारी, शोषण, दासता, बाढ़, अकाल, दलित हत्याएँ, भूमि, संघर्ष, महँगाई और जड़ता जैसे अनेक तत्व इनके रिपोर्ताजों के फलक को विस्तार देते हैं। रेणु के रिपोर्ताज मात्र परिदृश्य नहीं हैं, अपनी संरचना में औपचारिक नहीं हैं और इनकी सुंदरता में रचनात्मक स्तर पर कोई कौशल नहीं है बल्कि इनके यहाँ लोक तत्व की प्रधानता है अर्थात् रेणु लोक जीवन में सौंदर्य की खोज करते हैं और वहीं से वे रस ग्रहण करते हैं। वे मनुष्य को उसकी वास्तविक सामाजिक, राजनीतिक, सांस्कृतिक और आर्थिक स्थितियों के बीच रखकर देखते हैं। यहीं से वे विषय का चुनाव करते हैं। कहना न होगा कि रेणु ने अपने रिपोर्ताजों में इतने जीवन-प्रसंगों, संदर्भों, साहित्य और लोक तत्वों को समेटा है कि उनकी ये रचनाएँ अपने आप जीवंत, सार्थक और पठनीय हो जाती है। उनमें वर्णित प्रसंग कहीं भी फालतू या निरर्थक नहीं लगते बल्कि उनमें एक नयी अर्थवत्ता और कलात्मकता झलकती है। इस तरह उनके यहाँ सब कुछ अर्थवान और प्रासंगिक लगता है।

रेणु अपने रिपोर्ताजों में इतने विषयों को शामिल करते हैं कि उसमें नये-नये आयाम जुड़ जाते हैं। बोधगया में मंदिर और बोधि का दर्शन करते हुए उन्हें अपनी गौरवमयी प्राचीन सांस्कृतिक परम्परा की याद बरबस आ जाती है - 'मंदिर के प्रांगण मे घूमते हुए मुझे रह-रह कर रिपुंजय, बिंबिसार, अजातशत्रु, शिशुनाग, महापद्म नंद, चन्द्रगुप्त, अशोक, शून्य-पुराण और कम्युनिस्ट मेनिफेस्टों की याद आई। राहुल जी, भदंत और नागार्जुन की याद आई।'

15.4 रिपोर्ताज 'एकलव्य के नोट्स' का पठन

ग्राम - परानपुर
पोस्ट ऑफिस - एजन
थाना - फारबिसगंज
ज़िला - पूर्णिया, बिहार
काल - सितंबर, 54

जिले का एक बड़ा गाँव। विभिन्न जातियों के तेरह टोले हैं। मुसलमान टोली छोटी है, पचास घर रह गए हैं। आबादी सात-आठ हजार करीब।

पढ़े-लिखे लोग आठ ग्रेजुएट, एक एम.ए. (पागल होने के पहले ही पास किया था), पचास मैट्रिक्युलेट, एक सौ मिडिल पास। डेढ़ दर्जन कवि, करीब दो दर्जन कथाकार, दो साहित्यालंकार और एक नाटककार। पिछले साल एक हरिजन ने बी.ए. पास किया है, सबसे पहले। लड़कियाँ भी पढ़ी-लिखी हैं। जिले की एकमात्र साप्ताहिक पत्रिका में एक कुमारी कवयित्री की रचनाएँ हमेशा छपती हैं। यह और बात है कि लोग तरह-तरह की बातें करते हैं उनकी रचनाओं के संबंध में।

विद्यालय - एक उच्चांग्ल है (H-E School, Estd- 1929) । वह था तो मिडिल स्कूल, उच्चांग्ल तो हाल में ही हुआ है (उन्नीस सौ चौंतीस में)। व्यंग्य करते समय कहते हैं - उच्चांग्ल, यों एच.ई. स्कूल ही कहलाता है। स्कूल के लिए पैसे जिस वृद्ध दाता ने दिए थे, उसके लड़कों ने अपने पिता के नाम पर स्कूल के नामकरण का विरोध किया था, इसलिए वृद्ध दाता की जाति के नाम पर स्कूल की नामकरण क्रिया हुई थी - ब्राह्मण एच.ई. स्कूल। ... गत तीन वर्षों से कोई हेडमास्टर दो महीने से ज्यादा नहीं टिक पाते। ...जाति और पंचायत, गाँव की दलबंदी के ऊपर चढ़े करेले की भुजिया स्कूल कमेटी की कड़ाही में भूँजी जाती है न ...इसीलिए...! स्कूल की अवस्था शोचनीय कही जाती है।

पुस्तकालय-स्थापना 1930. 1944 से सरकारी सहायता मिलती है। पाँच साल पहले रेडियो भी दिया गया - राज्य सरकार की ओर से। आजकल बंद है। पुस्तकालय के सदस्यों का कथन है, 'छित्तन बाबू के बड़े भाई साहब ने ही पुस्तकालय के लिए अपने बँगले की एक कोठरी दी थी।' चार

महीना पहले की बात है, छित्तन बाबू ने साफ लफ्जों में कह दिया - 'यहाँ लाइब्रेरी कहाँ है? खबरदार! यदि सीढ़ी पर किसी ने पैर रखा तो फौजदारी हो जाएगी।... ट्रैसपासिंग का मुकदमा कैसा होता है, किसी वकील से जाकर पूछो।'... 'छित्तन बाबू बड़ा अन्यायी है, सार्वजनिक पुस्तकालय को इस तरह हथिया लेना छोटी बात नहीं।... निंदा का प्रस्ताव पास होना चाहिए।'

छित्तन बाबू का कथन है - 'पिछले दस साल से पुस्तकालय वाले सरकार से घर-भाड़ा के नाम पर चालीस रुपए माहवार वसूलते हैं। कभी एक पैसा भी दिया है मुझे?... चार-पाँच हजार रुपयों की बात है, खेल नहीं। ... कहाँ गए रुपए, कुछ हिसाब तो होना चाहिए... सरकारी रेडियो, बिकू बाबू की सुहागरात में बजने के लिए गया। उसी रात से खराब होकर उनके यहाँ पड़ा है।... बैटरी का पैसा सरकार से बराबर वसूला गया है।'

बिकू बाबू और छित्तन बाबू के झगड़े में, जातिवाद के पचड़े। फिर सेक्रेटरी प्रेसिडेंट कलह-कांड।... इसलिए, छित्तन बाबू का पंचवर्षीय पुत्र 'दीपशिखा' के पृष्ठों को काट-काटकर दीवार पर चिपकाता है, उसे कौन मना कर सकता है?

नाट्यशाला-स्थापना 1929. 1930 में राजबनैली चंपानगर के दरबार कलकत्ता की 'लड्डन कंपनी' को पानी-पानी कर दिया था परानपुर नाटक-मंडली ने। चार साल पहले तक नाटक खेले गए हैं - हिंदी के प्रसिद्ध नाटककारों की किताबों को स्टेज किया है। (डायलाग पारसी अंदाज में ही बोलते हों, मगर स्टेज जरूर करते थे।) पिछले साल एक बार ब्राह्मण टोली के मिश्रजी की बैठक में नया एकांकी खेला गया तो भूमिहार टोली में दूसरा एकांकी स्टेज हुआ।

...भूमिहार पुत्रों ने ब्राह्मण समाज के एकांकी करने वाले नौजवानों पर उसी समय से व्यंग्य करना शुरू किया है। ब्राह्मण टोली के एकांकी के एक पात्र की नकल उतारकर लगीनासिंह आज भी बता देते हैं - पारसी कंपनी वालों की तरह -'दे-ए-ए-ए-वी-वी-द-नू-ई-ज-द-ली-ऊ-नी-का-क्या-आ-दे-स्-है-ए...'

फिर आवाज पतली बनाकर तुरंत ही 'उत्तर' जड़ देते हैं - 'स-ब-SSसे-स-है (लंबी आह लेकर!) सब सेस है भगवान, सब सेस है।'

दनुजदलनी देवी का पार्ट, ब्राह्मण टोली में करने वाला मिला नहीं। तंत्रिमा टोली के धनपत को रटाया गया। धनपत ततमा टोली की 'बलवाही मंडली' (बाउलसुर में नाचने-गानेवाली मंडली) का 'नटुआ' है। दाढ़ी-मूँछ नहीं है। 'वलगोबना' है। अपढ़ है, किंतु पार्ट रटा दिया गया था ऐसा कि...।

ब्राह्मण टोली के अभिनेतागण जरा मुस्कुराकर कहते- 'कहाँ से लाए भाई... साक्षात् फिल्म स्टार है लीला देवी'

भूमिहार टोलीवालों ने क्रांति की थी।...मनमोहन बाबू वामपंथी हैं। उन्होंने अपनी छोटी बहन को पढ़ाया-लिखाया है। पटने में पढ़ती है, मनमोहन बाबू के मामा कांग्रेसी एम.एल.ए. हैं।... लीला फिल्मी गीत नकल करती है। एकांकी में उसने अभिनय किया था। भूमिहार टोली के किसी नौजवान ने अपने विरोधी कैंपवालों पर रोब गालिब करते हुए सुनाया था - 'एकदम फिल्म स्टार उतर आई थी समझो।' ... इसलिए 'साक्षात फिल्म स्टार' कहकर ब्राह्मण टोली वाले लड़के मंद-मंद मुस्कुराते हैं। इसी बात को लेकर एक दिन मारपीट हो जाती। बात यह हुई कि...

[यह, विद्यार्थी एकलव्य के नोट्स का एक अंश है। एकलव्य जो अपने को 'समाज विज्ञानी' कहते हैं। किसी विश्वविद्यालय से संबंध नहीं। पिछले साल तक पटने के एक सचित्र हिंदी साप्ताहिक के संपादन में सहायता करते थे - अपने एक परमपूज्य साप्ताहिक संपादकजी की। अचानक एक दिन गायब हो गए - जुलाई 1954 में। यार लोग बहुत-सी बातें उड़ाने लगे। पत्र के संपादक एकलव्यजी के शुभचिंतक साहित्यिकजी पर अप्रत्यक्ष रूप से इल्जाम लगाए गए, किंतु एकलव्यजी ने उपर्युक्त साप्ताहिक पत्रिका के कालमों के द्वारा अपने सभी हित-अहित, शुभ-अशुभचिंतक मित्रों को लिखा : 'एकलव्य ने अस्थायी रूप से पत्रकारिता छोड़कर पूर्णिया के एक गाँव में 'पॉलट्री' खोली है। प्रयोग को वे पाप नहीं समझते। व्यापार उतना लाभदायक नहीं जितना कि 'टेक्स्ट बुक-चाबी निर्माण!' ... किंतु, बुरा नहीं। जलवायु अच्छा है। ... पत्रकार तथा साहित्यिक बंधुओं को सादर निमंत्रण। ... हिरन, साँभर, बनैले सूअर तथा नीलगाय के शिकार का शौक रखने वाले अपने बंदूक वाले मित्रों को साथ ला सकते हैं।'

पटने के विभिन्न होटलों, रेस्तराँ तथा कैंटीनों में बैठे हुए एकलव्यजी के मित्रों ने 'टेबलतोड़' ठहाके लगाए थे - 'साला! सचमुच पागल हो गया।'

- पत्रकारिता खेल नहीं बच्चू!

- रंग उतर रहा था ... साला भारी चालाक है!

- एक आर्टिकल के बल पर 'संपादकी' करने आया था!

किंतु एकलव्य के 'संपादक' को भरोसा था। एकलव्य को वे 'आर्ट' और 'लिटेरेचर' का अधिकारी नहीं तो उत्तराधिकारी जरूर मानते थे। ... हिमाकत! और क्या कहेंगे? एकलव्यजी की 'कुक्कुट* पालन साधना' में भी उन्हें साहित्य और समाज की समृद्धि की संभावना दिखलाई पड़ती थी!

जून 1955 में एकलव्यजी पटना लौट आए हैं, कालाआजार तथा 'डिसेंट्री'* लेकर। तब से पटने के जेनेरल हास्पिटल के एक जेनेरल वार्ड में भर्ती हैं। अपने संपादक को उन्होंने हस्तलिखित कागजात का बड़ा पोथा सुपुर्द किया है। संपादकजी उस पोथे के बारे में जब-जब अपने बंधु-बांधवों से कुछ कहना चाहते हैं, लोग बात काटकर एकलव्य के ब्लडप्रेशर की रिपोर्ट तथा उसके दिमाग की कुशल पूछते हैं।

संपादकजी ने हिंदी की विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं की सेवा में 'एकलव्य' के नोट्स' के अंश प्रकाशनार्थ प्रेषित किए। अधिकांश पत्रों ने धन्यवादपूर्वक नोट्स को वापस कर दिया है। ... बहुतों ने तीखी-मीठी टिप्पणियों के 'खरोंच' भी लगाए हैं।]

बात यह हुई कि...। एक बात पहले की कह देना अच्छा है।... इधर कुछ दिनों से लगता है कि दुनिया तेज़ रफ्तार से भागी जा रही है। दिशा ज्ञान की बातें पीछे करूँगा चाल की तेजी का अनुभव सभी कर रहे हैं। ... उदहारणार्थ - लैंड सर्वे सेट्लमेंट! ज़मीन की फिर से पैमाइश हो रही है। साठ-सत्तर साल बाद। भूमि पर अधिकार! बँटैयादार* का ज़मीन पर सर्वाधिकार हो सकता है, यदि वह साबित कर दे कि ज़मीन उसी ने जोती-बोई है।... चार आदमी कह दें, बस हो गया। बिहार टेनेंसी एक्ट की दफा 40 के मुताबिक लगातार तीन साल तक ज़मीन आबाद करने वालों को 'आकोपेंसी राईट' (मौरूसी हक) हासिल हो जाता था। जमींदारी प्रथा खत्म करने के बाद राज्य सरकार ने अनुभव किया - पूर्णिया जिले में एक क्रांतिकारी कदम उठाने की आवश्यकता है।...हिंदुस्तान में, संभवतः सबसे पहले पूर्णिया जिले पर ही 'लैंड सर्वे आपरेशन' का प्रयोग किया गया है। जिले में जमींदार राजाओं की जमींदारियों का विनाश अवश्य हुआ, किंतु हिंदुस्तान के सबसे बड़े किसान यहीं निवास करते हैं।... गुरुवंशी बाबू जमींदार नहीं, किसान है। दस हजार बीघे ज़मीन है। दो हवाई जहाज रखते हैं। दूसरे हैं भोला बाबू। करीब पंद्रह-बीस हजार बीघे ज़मीन है, सवा दर्जन ट्रैक्टर हैं। पर यह बात सच्ची है कि वे ज़मींदार नहीं। ... पाँच सौ बीघेवाले किसान मध्यवर्गीय किसान कहलाते हैं। गाँव-गाँव पर इन किसानों का राज! भूमिहीनों की विशाल जमात। जगती हुई चेतना। ... ज़मींदारी प्रथा समाप्त होने के बाद भी हर साल फसल कटने के सयम एक-डेढ़ सौ लड़ाई-दंगे और चालीस-पचास 'मरडर' होते रहे तो फिर से ज़मीन की बंदोबस्ती की व्यवस्था की गई है। एक विशाल आँधी की प्रतीक्षा में 'क्षयिष्णु' समाज, समाज के गाँव, गाँव के लोग खड़े हैं...

शहर से (पटना से) शशांक ने लिखा है - 'हिंदी साहित्य की प्रसिद्ध 'परसनेलिटी' ने कहा है - 'एकलव्य एक दिन अपनी गलती पर पछताएगा।..., गाँव, अंचल, आंचलिक वगैरह-वगैरह के गोरखधंधे से निकालकर उसे शुद्ध साहित्य की रचना करने को कहो!'

पक्की बात है। मुझे अपनी पॉलट्री पर ध्यान देना चाहिए। बिजनेस इज बिजनेस।... मगर यह गांव! 1880 साल में मि. बुकानन ने अपनी 'पूर्णिया रिपोर्ट' में इस गाँव के बारे में जो लिखा है, उसकी कुछ पंक्तियों का अनुवाद है : इस इलाके के लोग परानपुर को सारे अंचल का 'प्राण' कहते हैं। अक्षरशः सत्य है उनका कथन। ... गाँव से पच्छिम बहती हुई दुलारी-दाई की धारा। तीन ओर विशाल प्रांतर। जिले के नक्शे के बीचोंबीच उत्तर से दक्खिन की ओर पड़ी हुई लाखों एकड़ बादामी रंग की धरती...परती! दुलारी-दाई जिसकी पच्छिमी रेखा है, जहाँ से हरियाली शुरू होती है। अपने दोनों हाथों से दोनों कछार की धरती पर सुख-समृद्धि बाँटती हुई दुलारी-दाई...बंध्या धरती की समवेदना में बहती हुई अश्रुधारा जैसी। .. गाँव के दक्खिन हजारों सेमल के पेड़ों का बाग है। सेमलबनी! ... फूलों के मौसम में 'लाल आसमान' को मैंने देखा है - अपलक नेत्रों से, अरज*-भरी निगाहों से। ... लाल आसमान!

सेमल का बाग आज भी है। हर पाँच-सात साल के बाद नई पौध! कहते हैं, सात साल पहले एक दियासलाई कंपनी का ठेकेदार आया और सेमल जिसको (जिसके फल को) गिलहरी भी न खाए, जिसकी लकड़ी से कोई मुर्दा भी न जलाए, शीशम के दर बिकने लगा। लेकिन इसी को कहते हैं तकदीर का खेल! वन के मालिक के अधपगले एम.ए. पास पुत्र ने साफ जवाब दे दिया - 'एक पेड़ भी नहीं बेचूँगा।' साठ हजार रुपये की 'आखिरी डाक' देकर कंपनी का ठेकेदार चला गया। ... हाय-हाय करने से क्या होता है? ज़मींदारी चली गई, सेमलबनी पर सरकार का कब्जा हो गया। सरकार जो चाहो करे। ... अब हाईकोर्ट में अर्जी दी है - 'सेमल के गाछ का सर्वनाश न किया जाए।'... पागल आदमी को कौन समझाए?

इस तथाकथित अर्द्ध-पागल नौजवान से मैं मिला हूँ। सनकियों के कुछ लक्षण उसमें अवश्य हैं। सेमल बाग को न बेचने का कारण पूछने पर चिढ़कर उसने कहा था - 'आप नहीं समझिएगा साहब।... आप समझ ही नहीं सकते मेरी बात...'

फूलों के मौसम में सेमल की नंगी बाँहें जब लाल-लाल फूलों से भर गईं, एक सुप्रभात के आसमान की फिजा देखकर मैंने मन-ही-मन उस अर्द्ध-पागल नौजवान को श्रद्धापूर्ण नमस्कार किया। उसने अति शिष्ट एवं सभ्य भाषा में मुझे कड़वी गालियाँ दी थीं।

मेरे प्यारे गैबी...हाँ, यह मेरे मुर्गे का नाम है। रोड्स जाति का है। बड़ा अक्खड़, बड़ा लड़ाका। मेरे प्यारे गैबी पर भी सिंदूरी जादू चल गया है मानो। अस्वाभाविक ढंग से चकित होकर बार-बार इधर-उधर देखता है, अरुणचूड़ा चमकाकर नाचता है, बाँग देता है ... जन्मजात 'लेफ्टिस्ट' है मेरा गैबी! बाँग जब देने लगता है, तो लगता है, कंबख्त नारे लगा रहा है।... नारे से बेहद चिढ़ते हैं कुछ लोग।... चुप रहो प्यारे! वर्ना कभी जिबह कर दिए जाओगे!*... और ये छोटी-छोटी देशी मुर्गियाँ भी बिलायती बोल बोलती हैं जब गैबी नारा लगाता है।... गैबी का क्या दोष?.. सेमल को फूलते देखकर हवा भी बावरी* हो गई है।... चक्की पीसते हुई लड़कियाँ गाती हैं...

'सेमली के बगिया अगिया लागी...रही!'

गैबी ने आसमान सिर पर उठा लिया है। उसका क्या कसूर? मेरी भी कविता करने की इच्छा हो रही है -

'लाल-लाल फूल से भरे
हजारो हाथ आस्माँ में उठाए
हम खड़े हैं
काल पर्दे के पार बेबस
ओ! नए युग की पहली सुबह,
रात के किले में कैद नए आफताब* सुनो!
हम तुम्हें आज़ाद करने आए हैं!

[यह धन्यवादपूर्वक अस्वीकृत अंश है 'एकलव्य के नोट्स' का। पत्र के संपादक ने एकलव्यजी के परम शुभचिंतक संपादक से मौखिक रूप में कहा - 'बेवजह बहुत 'लाल-लाल' चिल्लाने की चेष्टा है।... 'एक पिछड़े हुए जिले के खास अंचल का 'डिड्डम' पीटा है। ... 'कथा साहित्य' को इस 'नोट' से कोई तालुक नहीं।... संपादकजी ने एकलव्य के नोट्स से और दो टुकड़े लेकर इसमें जोड़ दिए हैं।]

बौंडोरी! बौंडरी!!

सर्वे का काम शुरू हो गया है। अमीनों की विशाल फौज उतरी है।..बौंडोरी, बौंडोरी!

बौंडोरी अर्थात् बाउंड्री! सर्वे की पहली मंजिल! अमीनों के आगमन के साथ ही गाँव में नए शब्द आए हैं - सर्वे से संबंधित! बच्चा-बच्चा बोलता है।

सर्वेकी पहली मंजिल बाउंड्री! फिर किश्तवार तब मुरब्बा, खानापुरी, तनाजा, तसदीक और दफा तीन...।

जरीब* की कड़ी, तख्ती, राइटेंगल, गुनियाँ, कंपास आदि लेकर अमीन लोग अपने टंडैलों* के साथ धरती के चप्पे-चप्पे पर घूम रहे हैं। जरीब की कड़ी खनखनाती हुई सरक रही है - खन-खन-खन!!

सर्वे के अमीन साहब का कहना है - 'यदि किसी 'प्लाट' पर एक कौआ आकर कह दे कि ज़मीन मैंने जोती-बोई है, तो उसका नाम लिखने को हम मजबूर हैं।... यही कानून है। यह मत समझो कि 'बौंडोरी' बाँध रहा हूँ...'

मैंने शशांक के पत्र का जवाब दिया है - 'शशांक! यह मत समझो कि 'बौंडोरी' बाँध रहा हूँ।... चार, महीने हो रहे हैं, बहुत बड़ी-बड़ी बातें होते देख रहा हूँ... अब इस अंचल को क्या करूँ कि 'जादू-टोना' मारे जा रहा है।...मैं बहुत करीब से देख रहा हूँ इस उथल-पुथल को।...धरती पर आकश की परी उतरती है, हौले-हौले! हरसिंगार की डालियों से जरा-सी चुनरी उलझी, मृदु झटके से जो फूल झरे, शरद की चाँदनी में भींगी धरती पर पड़ते-झरते हरसिंगार के 'परस' की ख़बर मुझे हो ही जाती है। युगों से पददलित, शोषित, भुक्खड़ भूमिहीनों की टोली यहाँ हर टोले में, दिन-रात न सुनूँ?...क्या कहता है - हमारा प्रतिष्ठित मित्र? कान बंद कर लूँ?...

'धरती में कान लगाकर दिन-रात सुनता हूँ!...

'क्या सुनता हूँ, नहीं सुनना चाहते तुम न सुनो। बहरा कैसे हो जाऊँ मित्र...! ज़िले-भर में किसानों और बेजमीनों में महाभारत छिड़ा हुआ है। दुखरन साह मेरे पड़ोस में रहते हैं, छोटी दुकान है।

पचास बीघे जमीन है। भोगनेवाला कोई नहीं।...उसने सोचा था - 'भूदान' में दो बीघे जमीन दान देने से अड़तालीस बीघे तो बच जाएँगे। हजार बीघेवाला भी एक इंच ज़मीन छोड़ने को राजी नहीं... 'बोर' मत होना दोस्त! अजीब जिला है यह!"

मगर, अमीन साहब कहते हैं, 'असल चीज़ है बाउंड्री। अभी जिसका नाम दर्ज हो गया, समझो पत्थर पर रेखा पड़ गई।' इसीलिए ज़मीन वाले और बेज़मीन सभी उन्हें हमेशा घेरे रहते हैं। न जाने कब कोई कौआ उड़कर आए और तनाजा* दे दे ज़मीन में।

'तनाजा' सर्वे की एक मंजिल है!

तनाजे का फैसला कानूनगो साहब करेंगे। इनको बहुत 'पावर' है। अभी अमीन और सुपरवाइज़र इनके 'अंडर' में रहते हैं।...पाँच महीने तक 'तनाजा' का फैसला होगा!...सबों ने पाट बेचकर पैसे जमा कर रखे हैं, क्या जाने कब रुपये की जरूरत पड़ जाए!... दिन-रात कचहरी लगी रहती है कानूनगो साहब की। कानूनगो के 'चपरासीजी' को इलाके के बड़े-से-बड़े ज़मीन वाले हाथ उठाकर - 'जयहिंद' करते हैं - "जयहिंद चपरासीजी!... कहिए, कानूनगो साहब को चावल पसंद आया? असली बासमती चावल है, अपने खर्च के लिए घर में था।...जी-जी-हाँ।...घी आज आ जाएगा।"

कचहरी लगी रहती है - देशसेवकों की। कांग्रेसी, समाजवादी, कम्युनिस्ट सभी पार्टीवालों ने अपने बाहरी 'वरकर' मँगाए हैं। गाँव के 'वरकरों' की बात उनके अपने परिवार के ही अन्य सदस्य नहीं मानते।...अपना-अपना भाग्य!अपना-अपना हिस्सा!

बहुत से 'वरकरों' का ट्रायल होने वाला है। सेवकों की सेवाओं की परख हो रही है।

सभी पार्टी के कार्यकर्ता सतर्क हैं, सचेष्ट हैं। बँटाईदारी करने वालों के नाम पर्चा दिलवाने का व्यापार बड़ा टेढ़ा है।

चौहद्दी* के गवाहों की गवाही बड़ी पुख्ता समझी जाती है - कानूनगो के सामने।...प्लाट नंबर 472! इसके उत्तर कौन है? 471 में? जीतू हजरा? क्यों जी? जीतू हजरा, क्या तुम्हें मालूम है कि तुम्हारी ज़मीन के दक्खिन किसकी ज़मीन है? रेखागणित के सहारे बात आसानी से समझी-समझायी जा सकती है।...क्योंकि, प्लाट नंबर 472 का 'तनाजा' जाँच रहे हैं हाकिम। 472 पर दो-दो दावे हैं। ज़मीन मालिक मोती मिसर और बँटाईदार सुखानू राउत के अलावा और भी दो बँटैयादारों के दावे हैं। सबों के दावे हैं कि वे ही असल बँटैयादार हैं।...472 के उत्तर 471 में जीतू हजरा के बाप का नाम पुराने कागजात में दर्ज है - कायमी बँटाईदार की सूरत से।...एक पार्टी ने उसको गवाह बनाया है। दूसरी पार्टीवाला कागज पेश करता है - 'हुजूर माय-बाप! देखा जाय। जीतू हजरा के बाप ने अँगूठे का निशान लगाकर पच्चीस साल पहले 'सुपुर्दी' लिखकर दी है, इस ज़मीन पर हमारा या हमारे वारिसान का कोई हक नहीं रहेगा।'...रेखागणित के द्वारा ही यह साबित होता है कि प्रत्येक प्लाट पर पाँच-पाँच आधीदारों* के झगड़े हैं।...व्यक्ति की लड़ाई।...कानूनगो साहब मुस्कुराकर पार्टी वरकरों की ओर देखते हैं - "आप लोग तो जनता के नेता हैं। देखिए, कितना झंझट का काम है। मैं किसे सच मानूँ।"

ज़मीन वाले फर्जी बँटैयादार खड़ा कर रहे हैं।...ज़मीन बचाने के लिए वे हर तरह के कुकर्म कर सकते हैं।

'मगर फर्जी बँटैयादारों की संख्या जोड़कर देखिए...बहुमत की फर्जी...।' कानूनगो साहब बिच्छू की तरह डंक मारकर हँसते हैं, दुष्ट हँसी! सभी पार्टी वालों पर उनके विरोधी दल का इल्जाम है...अपनी किसान सभा के मेंबरों को गैर-वाजिब ढंग से ज़मीन दिलाना चाहते हैं। गाँव में 'सपोर्ट' शब्द खूबा प्रचलित हो गया है।

"क्यों रामदैल! तुमको तो दो-दो पार्टी वाले 'सपोर्ट' करते हैं।...पर्चा तुम्हीं को मिलेगा।'..."अरे, नहीं भाई। बड़ा 'इंदरजाल' हो रहा है। कानूनगो साहब की 'इसतिरी' का 'ममहर' रामलगन बाबू की ससुराल के बगल वाले गाँव में है। लगता है आखिर 'तिरियाचलित्तर' का 'खेला' करवाएँगे रामलगन बाबू।"

किंतु लुत्तो बाबू की बात निराली है। शासक पार्टी के कार्यकर्ता हैं। सर्वे के समय उनकी कीमत और बढ़ रही है। बड़े लोगों की सेवा कभी निष्फल नहीं जाती। पाँच साल तक थाना कमेटी के नेताजी का बिस्तर यों ही नहीं ढोया है...लुत्तो बाबू ने।

"अरे, सोशलिस्ट, कौमनिस्ट को कौन पूछता है। ज़मीन लेनी है तो 'जय' बोलो लुत्तो बाबू की।"

सभी धीरे-धीरे जान गए हैं, सोशलिस्ट और कम्युनिस्ट पार्टी वाले जिनकी मदद करेंगे, उन्हें ज़मीन हरगिज नहीं मिल सकती, ब्रह्मा-बिष्णु-महेश भी उठकर आएँ तब भी नहीं।...इसमें कुछ-कुछ भेद है-जिसे सिर्फ लुत्तो बाबू ही जानते हैं। लुत्तो बाबू के चरण गहो..* ।

खेत-खलिहान, घाट-बाट, बाग-बगीचे, पोखर-पहार...पर खनखनाती हुई जरीब की कड़ी घसीटी जा रही है... खन-खन-खन-खन।

- क्या नक्शा बन रहा है!

- नया खाता, नया पर्चा...ज़मीन के नए मालिक!

तनाजा के बाद तसदीक!* तसदीक करने के लिए कानूनगो से ज्यादा 'पावर' वाले नए हाकिम साहब आए हैं। ए.एस.ओ. साहब। असिस्टेंट सर्वे ऑफिसर।...हर नया हाकिम नया एलान करता है।

'बाउंड्री-तनाजा हम कुछ नहीं जानता है। हम फिर शुरू से जाँच करेगा।...यही सरकुलर आया है। नया सरकुलर।'

छै महीने में ही गाँव का बच्चा-बच्चा पक्की गवाही देना सीख गया है।

छै महीने में ही गाँव एकदम बदल गया है। बाप-बेटे में, भाई-भाई में, अपने हक को लेकर ऐसी लड़ाई कभी नहीं हुई।... अजीब-अजीब घटनाएँ घटती हैं। सरबन बाबू की ही बात लीजिए...। सरबन बाबू इलाके के नामी-गरामी आदमी है। गाँव में अब भी काफी प्रतिष्ठा है। जवार-भर की पंचायतों में जाते हैं।...हाल में ही काशीजी से 'शिवलिंग' मँगवाकर स्थापना करवाई। पुण्य का झंडा लहरा रहा है आसमान में, शिवाले के ऊपर।... उनके छोटे भाई लालचन बाबू को किसी ने बताया कि सभी पर्चों पर सरबन बाबू अपने लड़कों के नाम या स्त्री का नाम चढ़वा रहे हैं। लालचन बाबू का नाम कहीं भी नहीं - एक 'प्लाट' पर भी नहीं। जिन पर्चों पर सरबन बाबू का नाम चढ़ा है, सरबन बाबू के साथ... 'बगैरा' भी नहीं है जो कभी लालचन बाबू दावा कर सकें...। लालचन बाबू पढ़े लिखे नहीं है तो क्या हुआ? इतनी-सी बात भी उनकी समझ में नहीं आएगी? उनके वकील साहब ने फीस लेकर सलाह दी है - 'आपको आगे बढ़ने की कोई जरूरत नहीं (आगे बढ़ने का मतलब यहाँ कोर्ट-कचहरी करने से है)... बड़े भाई को आगे बढ़ने दीजिए।'

लालचन बाबू ने दूसरे ही दिन 'मारे लाठी के' सिर फोड़कर सरबन बाबू को, यानी अपने बड़े भाई साहब को आगे बढ़ा दिया है।

सुना है, सरबन बाबू ने भरी कचहरी में कह दिया है।... ईमान-धरम खाकर उन्होंने कह दिया है - 'लालचन मेरा कोई नहीं!'

गाँव की 'अली-गली' अगवार-पिछवाड़ की ओर निकलने वाली पगडंडियाँ बंद की जा रही हैं।... डर है, नक्शा बन जाने का। खेत के बीचों बीच 'पगडंडी' यदि 'नक्शे' में दर्ज हो गई तो हो चुकी खेती!

आँधी चल रही है। दो साल तक लगातार चलेगी यह आँधी। बाउंड्री से तसदीक तक एक साल, दफा एक सौ तीन से एक सौ नौ तक दूसरे साल।

दीवानी-कचहरियों में बेदखली*, फसलजब्ती*, टायटिल-सूट का बाजार गर्म है। ठलुए वकीलों को भी दस रुपए रोज़ की आमदनी होने लगी है।...

मेरी 'पॉलट्री'?... एक खेवे के चूजों को पंख लग गए हैं। गैबी कल घायल हो गया है। लेगहार्न जाति के नौजवान मुर्ग, जुम्मन ने घायल कर दिया उसे पूरी तरह...। भगवान न करे मेरे गैबी को कुछ हो जाए। गैबी रह-रहकर पाँखें* फड़फड़ाता है। असह्य वेदना से उसकी आँखों की आरक्त पुतलियाँ काँपती हैं। जुम्मन की आवाज सुनकर उठने की चेष्टा करता है। खोल दूँ तो मर मिटे अभी।

बहुत बुरा स्वप्न देखकर उठा-जनवरी, 55 की पहली तारीख को। भोर का सपना, कहते हैं सत्य होता है!

हजारों सेमल के पेड़ों को काटते हुए देखा है - सपने में! फूलों से भरी पेड़ की डालियाँ छिन्न-भिन्न होकर इधर-उधर बिखरी हुई...।

जी 'उचाट' हो गया है।... तबीयत भारी रहती है।

भगवान भला करे 'बैकवार्ड और शिड्यूल्ड कास्ट' टोले के नौजवानों का! नाटक स्टेज करेंगे (अंग्रेजी नामकरण स्वयं 'बैकवार्ड और शिड्यूल्ड कास्ट' के नौजवानों ने किया है।... तीन साल पहले तक 'गंगोला' जाति के 'लीडर' लोग अपने क्षत्रिय के प्रमाण में बहुत लंबे-लंबे भाषण देते थे। नाम के अंत में 'सिंह' जोड़ते थे।... सरकार 'बैकवार्ड' और 'शिड्यूल्ड कास्ट' के लड़कों को स्कालरशिप देने लगी है, सरकारी नौकरियों में 'सीटें' रिजर्व रखती है।... मुरलीसिंह जी सवर्ण हिंदू हैं। सुनते हैं - उनके लड़के ने अपने को 'अनुसूचित जाति' की संतान बताकर, स्कालरशिप 'झीट' लिया है। साठ रुपए प्रतिमास।)

इस 'महाभारत' के बीच इन नौजवानों के उत्साह को देखकर मन प्रसन्न हो गया। नाटक खेल रहे हैं।

दलित वर्ग को हर तरह से मर्दित करके रखा गया था अब तक। नाटक मंडली के लिए प्रत्येक वर्ष खलिहान पर चंदा काट लेते हैं - मालिक लोग। लेकिन, कभी भी द्वारपाल, सैनिक, अथवा दूत का पार्ट छोड़कर अच्छा पार्ट... माने 'हीरो' का पार्ट नहीं दिया सवर्ण टोली के लोगों ने।

इस बार उन लोगों ने नाटक खेलने की तैयारी की है। पिछले साल गाँव के नाटककार श्री प्रेमकुमार 'दीवाना' जी ने एक नाटक लिखा। नाटक मंडली के एक-एक सदस्य को उन्होंने सुनाया-समझाया, मगर लोगों ने पसंद नहीं किया।

दलित वर्ग के नौजवानों ने 'दीवाना' जी के नाटक को काफी पसंद किया है। नाटक का नाम है 'प्यार का बाजार'।

दीवाना जी ने नाटक की रचना खासकर गाँव की नाटक 'मंडलियों के लिए' की है। दीवाना जी की बात विचार करके देखने की है। नाटक मंडली के लिए चंदा सभी देते हैं। और, नाटक में राजा, राजा का बेटा पुरोहित, मंत्री आदि जितने भी अच्छे पार्ट होते हैं, ऊँची जातिवालों को दिए जाते हैं। बाकी बचे हुए लोगों को 'जो आज्ञा' वाला पार्ट देकर टरका दिया जाता है।... कहेंगे नाटक में जितना पार्ट लिखा है, उससे ज्यादा लोगों को कैसे दिया जाए। भला, शहर के नाटक लिखने वालों को क्या मालूम कि गाँव में कितने लोग यों ही बिना पार्ट के रह जाते हैं। 'प्यार का बाजार'में तीस हीरो हैं। औरत का पार्ट कोई लेना नहीं चाहता, इसलिए एक घूँघटवाली हिरोइन की व्यवस्था की गई है - किताब में।... गाँव में गाँव के नाटककार का नाटक नहीं स्टेज करते... देश का कल्याण करने चले हैं।

- इसके बाद 'प्यार के बाजार' ने एक 'विराट व्यापार' का रूप धारण कर लिया।
- दलित नाटक समाज वाले जब सवर्ण टोली से 'पर्दा-पोशाक' लेकर चले गए तो मालूम हुआ कि अब वे 'पर्दा-पोशाक' लौटाकर नहीं देंगे।... पच्चीस साल से चंदा लिया जा रहा है, मगर कभी 'हीरो' का पार्ट नहीं मिला।... छित्तन बाबू ने पुस्तकालय को 'हथिया ' लिया। बिकू बाबू सरकारी रेडियो बजाते हैं- अपनी कोठरी में!... पर्दा-पोशाक पर दलित नाटक समाज का कब्जा होना जायज है।
- देखना है, कौन माँगने आता है पर्दा-पोशाक!
- एक मूँछ भी नहीं मिलेगी!

किंतु सवर्ण टोली पर जाहिरा इसकी कोई भी प्रतिक्रिया नहीं हुई। नाटक शुरू होने के दो घंटा पहले सवर्ण टोली के लोग भी पहुँचे। सबों ने मिलकर स्टेज की तारीफ की, सजावट को सराहा।

टोले में एक अभूतपूर्व आनंद की लहरें आई हुई थीं। पहली बार इस टोले में स्टेज बना था।

सवर्ण टोलीवालों ने अपनी गलती मान ली। मंत्रीजी बोले - "नाटक ही करना था तो मिल-जुलकर करते।"

- "दूर-दूर से लोग देखने आए हैं। क्या कहेंगे लोग?"
- "अरे भाई ज़मीन की लड़ाई ज़मीन पर, गाँव की लड़ाई गाँव में।"
- "नाटक मंडली में फूट होने से तो दुनिया हँसेगी।"
- "परानपुर की प्रतिष्ठा का प्रश्न है प्यारे भाइयो।"

'दीवाना' जी को समझा दिया गया कि नाटक मंडली ने उनकी किताब को अस्वीकृत करके भारी भूल की है। किंतु यह बात भी ठीक है कि 'दूसरे सीन' में संशोधन की आवश्यकता है। संशोधन करते ही नाटक चमक उठेगा। दीवाना जी ने उत्साह से हाथ फेंकते हुए कहा -"यह तो मेरे लिए बाएँ हाथ का खेल है। पाँच मिनट में कर सकता हूँ - संशोधन!"

सर्वसम्मति से यह संशोधन भी स्वीकृत हो गया कि सवर्ण और दलित दोनों टोले के लोग मिल-जुलकर नाटक खेलेंगे। सवर्ण टोली वाले सिर्फ संशोधित 'सीन' में उतरेंगे, दलित टोले के एक भी हीरो को 'ड्रॉप' नहीं किया जाएगा।

हारमोनियम मास्टर ने जब 'मतार कटारी मरि जाना' - बजाना शुरू किया तो किसी को भी होश नहीं रहा। दर्शकों ने तालियाँ बजाकर पर्दा उठाने की उत्कंठा प्रकट की।

पर्दा उठा। प्रथम दृश्य में नाटककार दीवाना जी ने पंद्रह मिनट भाषण देकर प्रमाणित कर दिया कि सिर्फ नाटकों से ही ग्राम सुधार संभव है। शर्त यह है कि गाँव में - गाँव के योग्य ही नाटक खेले जाएँ। गाँव में बढ़ती हुई कटुता नाटक से ही दूर हो सकती है, कुछ क्षण पूर्व की घटना द्वारा, प्रत्यक्ष प्रमाणित करने के बाद इंग्लैंड, अमेरिका, चीन, रूस आदि देशों के नाटकों पर भी प्रकाश डालने में काफी समय लग गया।

दूसरे ही सीन में (संशोधित सीन में) सवर्ण टोली के बीसों कलाकारों को एक ही साथ उतरना था।

सबसे पहले एक व्यक्ति हाथ में तलवार लेकर स्टेज पर आया।... दीवाना जी पर्दे की आड़ में जोर-जोर से 'प्रांपटिंग' कर रहे थे। किंतु उस 'हीरो' ने अपने 'डायलाग' में पुकारा -"साथियो! तैयार हो?"

अंदर से सम्मिलित आवाज़ आई -"हम तैयार हैं।"

"एक एक कर प्रवेश करो!"

बीसों कलाकार, किस्म-किस्म की पोशाकों और हथियार से लैस होकर आए। आठ-दस 'नायकों' के सिर पर बक्से भी लदे थे।... दीवानाजी दौड़कर स्टेज पर आए। उन्होंने कुछ कहने की चेष्टा की।

प्रथम 'हीरो' ने हुक्म दिया - 'इस व्यक्ति को कैद कर लो।' दीवानाजी को सबों ने घेर लिया। उन्होंने बहुत हाथ-पैर मारने की चेष्टा की। इस घेर-भाग और धड़-पकड़ से समवेत दर्शक मंडली बेहद खुश हुई और तालियों से इस संशोधित सीन का स्वागत किया गया।... हारमोनियम मास्टर साहब ने लड़ाई वाली धुन छेड़ दी। 'हीरो' आखिरी डायलाग बोला - 'निकल पड़ो!' बीसों 'हीरो' सारे साजो-सामान तथा पोशाक के साथ दर्शकों के बीच उतर पड़े।

दो नायकों ने 'नाटककार' जी को कंधे पर बेबस करके लटका लिया था। प्रथम हीरो ने दलित टोले के 'पंचायती पेट्रोमैक्स' को आगे बढ़ाकर गुल कर दिया।... भीषण कलरव* और कोलाहल में किसी की समझ में कोई बात नहीं आई कि क्या हुआ।

- कहते हैं, टँगे हुए पर्दे की डोरी तक वे काटकर ले गए!
- बारह-तेरह व्यक्ति बाँस के खरोंच से घायल हुए।
- थाने में खबर दी गई है। डकैती का अभियोग लगाकर नालिश की गई है।

सब हँसते हैं।... मैं हँसने के 'मूड' में नहीं हूँ। पंचायती पेट्रोमैक्स गुल हो जाए - यह हँसने की बात नहीं।

गैबी कल मर गया।

जुम्मन उसकी लाश के पास घंटों चुप-चाप खड़ा रहा।

- पशु-पक्षी को भी शोक होता है क्या?

बेकार की बातों में अपना दिमाग खराब करूँ, पागल हो जाऊँ शॉक से - यह मेरी व्यक्तिगत स्वाधीनता है! हमारी 'ह्यूमन-डिगनिटी' है!

['एकलव्य के नोट्स' के उपर्युक्त तीन असंलग्न खंडों को एक साथ किसी मासिक पत्रिका में प्रकाशित किया गया। 'कथा-साहित्य को ऐसी स्थूल चीज़ों की आवश्यकता नहीं', संपादकीय 'नोट' के साथ!

...किंतु समाजविज्ञान के एक प्रोफेसर साहब इसके लेखक एकलव्य से अस्पताल में मिलने आए।... संपादकजी से बातें करते समय प्रोफेसर साहब ने 'विलेज सर्वे' पर थोड़ा प्रकाश डाला। ... फील्ड स्टडी, साइकलोजिकल स्टडी, स्टेटिक तथा पेराडॉक्स आदि शब्दों से प्रयुक्त वक्तव्य के द्वारा 'एकलव्य के नोट्स' की आवश्यकता बतलाई।... 'पोथा' उन्हें सुपुर्द कर दिया गया है!]

साकेत (संपादक - उपेंद्रनाथ अश्क), 1955, में संकलित।

बोध प्रश्न-2

1. इस रिपोर्ताज में कौन-सी तीन अंतःकथाएँ हैं?
   क) .....
   ख) .....
   ग) .....

2. ये उक्तियाँ किसने कहीं और कहने वालों का मंतव्य क्या है?
   (क) 'जमीन लेनी है तो 'जय' बोलो लुत्तो बाबू की'
   (ख) 'नाटक ही करना था तो मिल जुलकर करते'
   (ग) 'सरकारी रेडियो बिकू बाबू की सुहागरात में बजने के लिए गया, उसी रात से खराब होकर उनके यहाँ पड़ा है। ..... बैटरी का पैसा सरकार से बराबर वसूला गया है।'
   (घ) 'सेमल के गाछ का सर्वनाश न किया जाए।'

15.5 'एकलव्य के नोट्स' का विश्लेषण

एकलव्य के नोट्स 'श्रुत अश्रुतपूर्ण' संग्रह का एक महत्वपूर्ण रिपोर्ताज है। वास्तव में, यह 'परती परिकथा' के लिए लिखा गया नोट्स है। ध्यान देने की बात है कि 'परती परिकथा' के केंद्र में परानपुर गाँव का ही चित्रण है। आज़ादी के बाद बदलते हुए गाँव की राजनीतिक-सामाजिक स्थिति को ब्यौरेवार ढंग से इसमें प्रस्तुत किया गया है।

15.5.1 प्रतिपाद्य

परानपुर बिहार के पूर्णिया जिले का एक बड़ा-सा गाँव है जिसमें विभिन्न जातियों के तेरह टोले हैं। आठ ग्रेजुएट, पचास मैट्रिक्युलेट, एक सौ मिडिल पास लोगों के अलावा डेढ़ दर्जन कवि, दो दर्जन कथाकार, दो साहित्यकार और एक नाटककार। इस गाँव की आत्मा की धड़कन हैं। दलितों एवं स्त्रियों में शिक्षा के प्रति बढ़ते रुझान को इंगित करते हुए रेणु ने लिखा है - 'पिछले साल एक हरिजन ने बी.ए. पास किया है, सबसे पहले। लड़कियाँ भी पढ़ी-लिखी हैं। जिले की एकमात्र साहित्यिक पत्रिका में एक कुमारी कवयित्री की रचनाएँ हमेशा छपती हैं।' परंतु साथ ही स्त्री के प्रति पुरुष की सनातन वृत्ति की ओर इशारा करने से भी रेणु-चूकते नहीं - 'यह और बात है कि लोग तरह-तरह की बातें करते हैं उनकी रचनाओं के संबंध में।

शिक्षण संस्थाओं में व्याप्त भ्रष्टाचार और जातिवाद का नमूना है परानपुर का स्कूल, जहाँ की अवस्था बेहद चिंतनीय हो गई है। 'गत तीन वर्षों से कोई हेडमास्टर दो महीने से ज्यादा नहीं टिक पाते। जाति और पंचायत, गाँव की दलबंदी के ऊपर-चढ़े करेले की भुजिया स्कूल कमेटी की कड़ाही में भूँजी जाती है। पुस्तकालय की स्थापना सन् 1930 में हुई थी। 1944 से सरकारी सहायता भी मिलती है लेकिन पुस्तकालय पिछले पाँच वर्षों से बंद है और उसे छित्तन बाबू ने हड़प लिया है। 'सरकारी रेडियो बिकू बाबू की सुहागरात में बजने के लिए गया, उसी रात से खराब होकर उनके यहाँ पड़ा है। बैटरी का पैसा सरकार से बराबर वसूला गया है।'

आज़ादी के बाद पंचायती राज के माध्यम से गाँव का विकास करने की जो थोड़ी-बहुत कोशिश शुरू हुई थी वह भी जातिवादी राजनीति में फँसकर रह गई। इस सिलसिले में पहली बात तो यह हुई कि पंचायतों पर आमतौर पर पूर्व ज़मींदारों अथवा धनी किसानों का कब्जा कायम हुआ और दूसरे विकास कार्यों के लिए मिलने वाली सहायता राशि सरकारी अधिकारियों और पंचायत प्रधानों के पेट में ही भस्म हो गई। भूस्वामियों ने अपनी ज़मीनें बचाने के लिए हर संभव कोशिश की और फ़र्जी बटाईदार खड़ा करके भूमिकानून का सरेआम मज़ाक उड़ाया। एक ही ज़मीन के कई हकदार निकल आए और हाकिमों के सामने रोने-घिघियाने लगे - 'हुजूर माय-बाप। जीतू हजरा के बाप ने अंगूठे का निशान लगाकार पच्चीस साल पहले 'सुपुर्दी' लिखकर दी है, इस ज़मीन पर हमारा या हमारे वारिसान का कोई हक नहीं रहेगा।'

रेणु ने आज़ादी के बाद पैदा होने वाले नवधनाढ्य* वर्ग के चरित्र पर प्रकाश डालते हुए लिखा है- 'किंतु लुत्तो बाबू की बात निराली है। शासक पार्टी के कार्यकर्ता हैं। सर्वे के समय उनकी कीमत और बढ़ रही है। बड़े लोगों की सेवा कभी निष्फल नहीं जाती। पाँच साल तक थाना कमेटी के नेताजी का बिस्तर यों ही नहीं ढोया है लुत्तो बाबू ने।' और अब हालत यह है कि 'ज़मीन लेनी है तो जय बोलो लुत्तो बाबू की।' लुत्तो बाबू इसी वर्ग के हैं। इसमें वे लोग हैं जिन्होंने आज़ादी के बाद ज़मींदारों के बराबर अपनी हैसियत कायम की अर्थात् धनी किसान, और वे भी, जो नेताओं की चापलूसी करते-करते अपनी सामाजिक-आर्थिक स्थिति सुदृढ़ करने में सफल हो गए।

रेणु ने अपनी रचनाओं में जातिवाद और भ्रष्टाचार और इनसे पैदा होने वाली विकृतियों को अधिक स्थान दिया है। तत्कालीन स्थितियों में यह स्वाभाविक था और लेखक की अपनी ईमानदार कोशिश थी। दलित-चेतना के उभार को भी रेणु ने अपनी रचनाओं में विशेष महत्व दिया है। कहना न होगा कि 'एकलव्य के नोट्स' दलितों में आई चेतना और अधिकारों के प्रति सतर्क दृष्टि का परिचायक है। उनमें यह समझ विकसित हुई है कि सवर्ण उनके साथ भेदभाव करते हैं इसलिए वे अब बराबरी के लिए संघर्ष करने की स्थिति मे तैयार दिखते हैं।

'दलित वर्ग को हर तरह से मर्दित करके रखा गया था अब तक। नाटक मंडली के लिए प्रत्येक वर्ष खलिहान पर चंदा काट लेते हैं - मालिक लोग लेकिन, कभी द्वारपाल, सैनिक अथवा दूत का पार्ट छोड़कर अच्छा पार्ट माने 'हीरो' का पार्ट नहीं दिया सवर्ण टोली के लोगों ने।'

अब यह अलग बात है कि अपने इस कार्य के लिए सवर्णों ने तमाम तर्क गढ़ रखे हैं। उनका एक जबर्दस्त तर्क यह है कि - 'नाटक में जितना पार्ट लिखा है, उससे ज्यादा लोगों को कैसे दिया।' लेकिन यहाँ तो मूल समस्या भूमिका के बँटवारे को लेकर है। हीरो का पार्ट सवर्ण टोली के हिस्से ही हमेशा क्यों रहे? कभी वह दलितों के हिस्से में क्यों नहीं जाता? दलितों को शिकायत इसी असामान्य वितरण या पक्षपात या कि ऊँच-नीच के भेदभाव को लेकर है। लिहाजा सवर्णों द्वारा अस्वीकृत प्रेम कुमार

'दीवाना' के नाटक 'प्यार का बाजार' को मंचित करने के लिए दलित अपने बल-भरोसे तैयार हो जाते हैं।

दलित नाटक समाज वाले जब सवर्ण टोली से 'पर्दा-पोशाक' लेकर चले गए तो मालूम हुआ कि अब वे 'पर्दा-पोशाक' लौटकर नहीं देंगे। पच्चीस साल से चंदा लिया जा रहा है, मगर कभी 'हीरो' का पार्ट नहीं मिला। छित्तन बाबू ने पुस्ताकलय को हथिया लिया बिकू बाबू सरकारी रेडियो बजाते हैं - अपनी कोठरी में। पर्दा-पोशाक पर दलित समाज का कब्जा होना जायज है।'

दलित वर्ग में इस बात का जो मलाल है वह बहुत हद तक हमारे सामाजिक-आर्थिक संबंधों के कारण ही है। श्रेष्ठता की भावना के कारण सवर्णों ने हीरो, मंत्री, सेनापति जैसी भूमिकाएँ अपने पास रख लीं और सदा से सेवक की भूमिका में रहते आए दलितों को दूत, चपरासी, कसाई, मदारी का रोल थमा दिया। यह ध्यान देने की बात है कि परानपुर गाँव में एक दलित भी उच्च शिक्षा प्राप्त है। तब यह कहने के लिए कोई जगह नहीं बच जाती कि दलित अनपढ़ हैं, इसलिए उन्हें 'हीरो' की भूमिका नहीं दी जा सकती।

गाँव के जीवन में कुछ नई चीज़ें आने से पारंपरिक संबंधों पर भी असर पड़ा। इन्हीं में से एक है सर्वे। सर्वे ने कुछ नए शब्द दिए - बौंडोरी, किश्तवार, मुरब्बा, खानापुरी, तनाजा, सटीक और दफातीन आदि। गाँव का बच्चा-बच्चा पक्की गवाही देना सीख गया है। छह महीने में ही गाँव एकदम बदल गया है। बाप-बेटे में, भाई-भाई में, अपने हक को लेकर ऐसी लड़ाई कभी नहीं हुई।'यह समाज की आंतरिक व्यवस्था में उथल-पुथल का नतीजा है। भाई अपने सहोदर को भरी कचहरी में कह देता है कि वह मेरा कोई नहीं है। बाप पर भी लोग विश्वास करने को तैयार नहीं हैं। पिता चूँकि छोटे भाई को ज्यादा प्यार करते हैं इसलिए हो सकता है सारी उर्वर भूमि उसके नाम कर दें।' रेणु ऐसे अवसरों पर राजनीतिक दलों और नेताओं की चुटकी लेने से नहीं चुकते।

'कचहरी लगी रहती है देश सेवकों की। कांग्रेसी, समाजवादी, कम्युनिस्ट सभी पार्टी वालों ने अपने बाहरी 'वरकर' मँगाए हैं। गाँव के 'वरकरों' की बात अपने अपने परिवार के ही अन्य सदस्य नहीं मानते।' लोगों से अपनी बात जबर्दस्ती मनवाने के लिए आए अपराधीनुमा तत्वों को बाहरी 'वरकर' नाम दिया गया है। रेणु निश्चित रूप से यहाँ राजनीति के अपराधीकरण की ओर संकेत करना चाहते हैं। इतिहास में यह भारतीय राजनीतिक के पतन का समय माना जाता है। समूचे मूल्य और आदर्श ध्वस्त होते चले गए और प्रजातंत्र ने ऐसा रूप ग्रहण कर लिया जिसमें सिर्फ़ तंत्र बच गया और प्रजा सिरे से गायब है।

'एकलव्य के नोट्स' के अंत में दलितों और सवर्णों के बीच होने वाली कशमकश या द्वंद्व को रेखांकित किया गया है। सवर्ण दलितों को पछाड़ने के लिए एक समझौता भरी चाल चलते हैं जिसे न तो नाटककार समझ पाता है और न ही दलित। सवर्ण टोली ने अपनी गलती मानकर, मिलजुलकर काम करने की इच्छा जाहिर की। इसे गाँव की प्रतिष्ठा के प्रश्न से भी जोड़ा गया और अंत में संशोधित दृश्य में एक साथ बीस सवर्ण कलाकारों को उतारने की योजना को अंतिम रूप दे दिया गया। बीसों सवर्ण कलाकारों को नाटक के दूसरे दृश्य में उतरना था:

> 'सबसे पहले एक व्यक्ति हाथ में तलवार लेकर स्टेज पर आया। दीवाना जी पर्दे की आड़ में जोर-जोर से प्राम्पटिंग कर रहे थे। किंतु उस हीरो ने अपने डायलाग में पुकारा- 'साथियो, तैयार हो?'
> अंदर से सम्मिलित आवाज आई - 'हम तैयार हैं।'
>
> हुक्म हुआ - 'एक-एक कर प्रवेश करो।' बीसों कलाकार, किस्म किस्म की पोशाकों और हथियारों से लैस होकर आए। आठ-दस नायकों के सिर पर बक्से भी लदे थे।
>
> प्रथम हीरो ने हुक्म दिया - 'इस व्यक्ति को कैद कर लो।' दीवाना जी को सबों ने घेर लिया। हारमोनियम मास्टर साहब ने लड़ाई वाली धुन छेड़ दी। हीरो आखिरी डायलॉग बोला - 'निकल पड़ो।' बीसों हीरो सारे साजो-सामान तथा पोशाक के साथ दर्शकों के बीच उतर पड़े।

x x x

दो नायकों ने नाटककार जी को कंधे पर बेबस करके लटका दिया था। प्रथम हीरो ने दलित टोले के पंचायती पेट्रोमैक्स को आगे बढ़कर गुल कर दिया।

रिपोर्ताज के उपर्युक्त अंशों में सवर्णों और दलितों के आपसी द्वंद्व को आसानी से महसूस किया जा सकता है। दरअसल, आज़ादी के बाद दलितों में आत्म-सम्मान की जो भावना जगी और साथ ही अपने अधिकारों के प्रति जागरूकता बढ़ी, उससे सवर्णों में एक तरह की बेचैनी का भाव पैदा हुआ। उन्हें लगा कि दलित उनके परम्परागत वर्चस्व और श्रेष्ठता को चुनौती देने लगे हैं। ऐसी स्थिति में सवर्णों ने तमाम तरह की चालाकियों से काम लेना शुरू किया और कहीं-कहीं उन्होंने दलितों को पछाड़ा भी। वैसे बदली हुई परिस्थितियों में सवर्ण दलितों को सीधी टक्कर देने के बजाय पीछे से वार करने में अपने कौशल का प्रयोग करते रहे हैं। रेणु ने इस रिपोर्ताज में जिस नाटक के आयोजन का ज़िक्र किया है उसमें सामाजिक विषमता और द्वंद्व का स्पष्ट संकेत मिलता हे। पर ध्यान देने की बात यह है कि इस रिपोर्ताज में लेखक महज तटस्थ द्रष्टा की भूमिका में नहीं खड़ा है बल्कि अपने सरोकार के साथ मौजूदगी दर्ज कराता है। 'पंचायती पेट्रोमैक्स गुल हो जाए - यह हँसने की बात नहीं' के माध्यम से रेणु की पक्षधरता सामने आ जाती है। यह एक लेखक की ईमानदारी और बुनियादी ज़रूरत का प्रमाण माना जा सकता है। 'एकलव्य के नोट्स' में दलितों की पीड़ा और जिजीविषा साकार हो उठी है। ऐसा रेणु की अतिशय संवेदनशीलता और मानवीय चेतना के कारण संभव हो पाया है। समाज के संबंधों और तनावों को इतनी गहराई से उजागर करने वाला यह रिपोर्ताज अपना विशेष महत्व रखता है।'इन रपटों को पढ़ते हुए रेणु से एक और साक्षात्कार होता है - ताज़ा सरोकारों और चिंताओं वाले रेणु से, धड़कते और प्रतिक्रिया करते रेणु से।' (सुरेन्द्र चौधरी - फणीश्वरनाथ रेणु)

'एकलव्य के नोट्स' में एक भावधारा अंतर्निहित है - वह है मुक्ति की आकांक्षा। नाटक को अपने बलबूते पर मंचित करने का संकल्प दलितों की मुक्ति की संकल्पना से जुड़ा हुआ है। सामाजिक दौड़ में पिछड़ गए साधारण लोगों की कथा इस रिपोर्ताज में कही गई है। रेणु के मनोजगत में क्रांति की जो अवधारणा पल रही थी। उसमें गाँव और शहर के भेद को मिटाने के साथ-साथ समाज के दमित-शोषित वर्ग की इच्छा-आकांक्षाओं और सपनो को साकार करने की बात भी निहित थी। यही कारण है कि 'एकलव्य के नोट्स' में दलितों द्वारा नाटक के आयोजन को सवर्णों द्वारा छिन्न-भिन्न किए जाने पर रेणु अपनी प्रतिक्रिया व्यक्त करने से नहीं चूकते। कहना न होगा कि यह रिपोर्ताज दलित-चेतना के उभार के साथ-साथ उनकी आंतरिक पीड़ा को मार्मिक ढंग से उभारता है। दलितों की इस पीड़ा मे रेणु की संवेदना भी शामिल है।

15.5.2 भाषा-शैली

फणीश्वर नाथ रेणु भाषा के कुशल कारीगर हैं। अपने कथ्य के अनुरूप वे भाषा को, जैसा चाहते हैं, रूप देने में माहिर हैं। 'मैला आँचल' और 'परती परिकथा' जैसे उपन्यासों में रेणु ने अपनी भाषिक क्षमता का भरपूर परिचय दिया है। इनमें मिथिला की अमराइयों में कोयल की मीठी तान प्रायः सुनाई पड़ जाती है। रेणु की भाषा में वह समूचा प्रांतर (स्थान विशेष) बोलता दिखाई पड़ता है जिसे उन्होंने अपने कथ्य का माध्यम बनाया है। आंचलिकता रेणु की विशेषता है। कहना न होगा कि उनकी यह पहचान उपन्यास, कहानी, रिपोर्ताज और यात्रा वृतांत सभी में परिलक्षित होती है। अन्य प्रादेशिक भाषाओं में लेखकों ने अपने-अपने अंचल के जीवन को उभारने की कोशिश की है लेकिन रेणु जैसी जीवन की सूक्ष्म अभिव्यक्ति बहुत कम देखने को मिलती है। रेणु की निरीक्षण शक्ति इतनी तीव्र, आंतरिक और गहरी है कि समूचा जीवन क्षेत्र उनके द्वारा आत्मसात किया हुआ प्रतीत होता है। यही कारण है उनकी रचनाओं में मिट्टी की धड़कन बहुत साफ़-साफ़ सुनाई देती है। रेणु ने अपनी रचनाओं, खास तौर से उपन्यासों में गाँव के समस्त रूप, रंग, वेश, परिवेश, समस्या, चाल-चलन, दिनचर्या और लोक संस्कृति का बहुत सधा और आत्मीय प्रयोग किया है। दूसरे शब्दों में उन्होंने उस क्षेत्र विशेष की कथ्य भाषा, गीत, कथा-कहानी और मुहावरों का सीधा प्रयोग किया है जिससे वह समूचा अंचल जीवंत हो उठता है।

रेणु की रचनाओं में प्रकृति जिस वैभव के साथ चित्रित हुई है उससे यह कहने में कोई हिचक नहीं होती कि वे मनुष्य के साथ-साथ प्रकृति के बहुत निकट के प्रेमी रहे हैं।

रेणु ने स्थानीय जनभाषा का जमकर इस्तेमाल किया है। इस तरह के प्रयोग से स्थानीय मानसिकता ज़्यादा स्पष्ट होकर उभरती है। स्थानीय भाषा के सहज और प्रभावशाली प्रयोग ने रेणु की प्रखर प्रतिभा का भरपूर परिचय दिया है।

यह अलग बात है कि रेणु ने अपनी कहानियों और उपन्यासों में जनभाषा का जितना इस्तेमाल किया है उतना अन्य विधाओं में नहीं। फिर भी गद्य की अन्य विधाओं में उन्होंने इनकी सीमाओं एवं प्रकृति का ख्याल करते हुए जनभाषा के माध्यम से प्राण फूँकने की कोशिश की है। जिन शब्द-विन्यासों, लोकोक्ति, मुहावरे, दोहे, गीत आदि को रेणु ने अपने अंचल के जनजीवन से उठाया है, वह उन जैसे गहरी अनुभूति सम्पन्न लेखक के लिए ही संभव है। रेणु जीवन से प्यार करते हैं। वे जीवन से जुड़े तमाम पक्षों को गहरी सहानुभूति के साथ उभारते हैं। इस तरह जन जीवन के साथ रेणु का संबंध बहुत आत्मीय हो गया है। रेणु की भाषा एक तरफ़ जीवन जीने की उनकी अपनी विशिष्टता से बनी है तो दूसरी ओर इलाके की भौगोलिक महिमा से। अनेक तरह की कथ्य भाषा मिथिला की परंपरा से घुल-मिलकर एक नई भाषा का रूप ग्रहण करती है। रेणु स्वयं नेपाली, मैथिली, बांग्ला, हिंदी, संथाली और पूर्णिया की कथ्य-भाषा पर अधिकार रखते थे। अतः उनके लिए पात्रों की मानसिकता के अनुरूप भाषा चुनने में कोई कठिनाई नहीं थी। 'यह आकस्मिक नहीं था कि रेणु जी की इस समग्र मानवीय दृष्टि को अनेक जनवादी और प्रगतिशील आलोचक संदेह की दृष्टि से देखते थे। कैसा है यह अजीब लेखक जो गरीबी की यातना के भीतर भी इतना रस, संगीत, इतना आनंद छक सकता है, सूखी-परती जमीन के उदास मरुस्थल में सुरों, रंगों और गंधों की रासलीला देख सकता है। सौंदर्य को बटोर सकता है, आँसुओं को परखता है, किंतु उसके भीतर से झाँकती धूल-धूसरित मुस्कान को देखना नहीं भूलता, एक सौंदर्यवादी की तरह नहीं, जो सुंदरता को अन्य जीवित तत्वों से अलग करके उनका रसास्वादन करता है।' (निर्मल वर्मा)

रेणु के लेखन में एक आनन्द समाया हुआ होता है। वे रूप, रस, गंध, स्पर्श और लय को बाँधते हैं - जीवन की लय में। रेणु भाषा के पारखी थे। उनका समूचा साहित्य इसका प्रमाण है। वे ऐसी भाषा का प्रयोग करते हैं कि सारे प्रसंग जीवंत हो उठते हैं। उनमें एक तन्मयता है - कबीर, मीरा, जयदेव, विद्यापति की तरह। राग-विराग का पूरा आत्मिक संसार है।

'एकलव्य के नोट्स' में 'प्रांपटिंग', 'ड्रॉप', 'डायलाग', 'सीन', 'ह्यूमन डिग्निटी' जैसे अंग्रेज़ी के शब्द भी प्रयोग में लाए गए हैं। इन शब्दों का प्रयोग रिपोर्ताज के अंतिम अंश में हुआ है जहाँ लेखक ने दीवाना जी के नाटक 'प्यार का बाजार' को मंचित करने की तैयारी का ज़िक्र किया है।

गाँव वालों का एक-दूसरे पर व्यंग्य करने का चित्र खींचते हुए रेणु ने अक्षरों के बीच काफ़ी जगह दी है ताकि यह स्पष्ट हो सके कि इन शब्दों को खींचकर बोला गया है।

'भूमिहार पुत्रों ने ब्राह्मण समाज के एकांकी करने वाले नौजवानों पर उसी समय से व्यंग्य करना शुरू किया है। ब्राह्मण टोली के एकांकी के एक पात्र की नकल उतारकर लगीना सिंह आज भी बताते हैं - पारसी कंपनी वालों की तरह - 'दो-ए-ए-ए-वी-वी-द-नू-ई-ज-ली-ऊ-नी-का-क्या-आ-आ-दे-स्-है-ए।' फिर आवाज पतली बनाकर तुरंत ही 'उत्तर' जड़ देते हैं - 'स-ब-SSसे-स-हैं (लम्बी आह लेकर)।'

रेणु भाषा को जनता की सुविधा के अनुरूप ढाल देते हैं। गाँव की सामान्य अशिक्षित जनता अगर 'बाउंड्री' का उच्चारण 'बौंडोरी' के रूप में करती है तो रेणु को इस पर कोई आपत्ति नहीं है। चरित्र का चरित्तर अथवा चलित्तर भी हो जाये तो उन्हें कोई परेशानी नहीं हैं। वे जानते हैं कि गाँव का अनपढ़ आदमी 'श्रवण' को सरवन ही कहेगा। लेकिन प्रकृति के बारे में बताते हुए रेणु कहीं-कहीं तत्सम शब्दावली का मनोरम प्रयोग करने से भी बाज नहीं आते। उदाहरण के लिए -
'अक्षरशः सत्य है उनका कथन।'

'एक विशाल आँधी की प्रतीक्षा में क्षयिष्णु समाज, समाज के गाँव, गाँव के लोग खड़े हैं।'

'उसके मन-सरोवर में तैरता हुआ हंस आज भी मोती चुगता है।

रेणु की विशेषता यह है कि वे प्रसंगानुकूल भाषा का प्रयोग करते हैं। अनपढ़ों के बीच बोलचाल की भाषा और शिक्षितों के बीच तत्सम प्रधान भाषा का प्रायः इस्तेमाल उनके यहाँ देखा जा सकता है। हास्य-व्यंग्य रेणु के लेखन का अभिन्न अंग है। इसके माध्यम से वे लोकरुचि को अभिव्यक्त करते हैं। विभिन्न भाषाओं के शब्दों को उन्होंने थोड़े-बहुत परिवर्तन के साथ हिंदी में प्रचलित कर दिया है। इससे हिंदी समृद्ध ही हुई है। लेकिन उन्होंने जिन शब्दों का प्रयोग किया है उन्हें आंचलिकता के रंग में डुबो

दिया है। नामों के व्यवहार में भी वे इसी तरह कथ्य भाषा या आंचलिकता के स्वरूप को बनाए रखते हैं, हालाँकि रिपोर्ताजों में इस तरह के प्रयोग कम मिलते हैं। पर इतना ज़रूर है कि रेणु ने ऐसे शब्दों का प्रयोग इलाके की विशिष्टता और जनजीवन की नैसर्गिक प्रवृत्ति को रेखांकित करने के लिए ही किया है।

'एकलव्य के नोट्स' में लोकजीवन की एक छवि देखने योग्य है - 'सेमल के फूल को देखकर हवा भी बावरी हो गई है। चक्की पीसती हुई लड़कियाँ गाती हैं - सेमली के बगिया अगिया लागी रही।

कहना न होगा कि रेणु ने अपने रिपोर्ताजों में जितनी गंभीरता और तल्लीनता का परिचय दिया है वह अन्यत्र दुर्लभ है। वे जन, अंचल के साथ-साथ भाषा को भी प्यार करते रहे, उनसे आत्मीयता स्थापित करते हैं। वे लोक रस को कहीं भी भंग नहीं होने देते। लोक से सम्पृक्ति या जुड़ाव ही उनकी भाषा का प्राण है।

बोध प्रश्न-3

1. रिपोर्ताज लेखन में रेणु की विशेषताओं पर अपने मत व्यक्त कीजिए।

.....

.....

.....

15.6 सारांश

'एकलव्य के नोट्स' रेणु का एक महत्वपूर्ण सारगर्भित रिपोर्ताज है। इसमें उन्होंने सदियों से शोषित-पीड़ित दलित समुदाय की राजनीतिक-सामाजिक चेतना को व्यक्त करने का प्रयास किया है। यही नहीं, इस रिपोर्ताज में रेणु ने यह भी दिखाने की कोशिश की है कि दलित में आ रही स्वाभिमान की भावना एवं अस्तित्व और पहचान के लिए निरंतर प्रयत्नशील रहने के कारण सवर्ण समाज में एक तरह की बेचैनी का भाव दिखाई देने लगा है। जिस पर सवर्णों का परंपरा से प्राप्त अधिकार बना हुआ था, आज़ादी के बाद, उनपर दलितों की बढ़ती दावेदारी सवर्णों की बेचैनी का प्रमुख कारण है। शिक्षा, राजनीति एवं प्रशासन में ऊँची जातियों का जो वर्चस्व बना हुआ है, उसे दलितों ने कड़ी चुनौती देनी शुरू कर दी है। दूसरे शब्दों में, दलित समुदाय के लोगों ने इन वर्जित क्षेत्रों में जैसे-जैसे घुसपैठ करना शुरू किया वैसे-वैसे सवर्ण जातियों के साथ उनका टकराव भी बढ़ा है। इस प्रकार सवर्णों के एकाधिकार और प्रभुत्व को दलितों की तरफ़ से जो चुनौती मिल रही है उससे इन दोनों समाजों के बीच राजनैतिक स्तर पर दूरियाँ भी बढ़ी हैं। कहने का तात्पर्य यह है कि जहाँ एक तरफ़ दलितों में अपनी अस्मिता और अधिकार को लेकर जागरूकता आई है वहीं दूसरी तरफ़ सवर्ण अपने एकाधिकार और प्रभुत्व को लेकर चिंतित और बेचैन हैं। वर्चस्व की इस लड़ाई के सूत्र 'एकलव्य के नोट्स' में निहित हैं। रेणु दलितों, उपेक्षितों और स्त्रियों के प्रति बेहद संवेदनशील लेखक हैं।

इस रिपोर्ताज का दूसरा कथा सूत्र है समाज के धनी, संपन्न वर्गों, अधिकारियों तथा राजनेताओं द्वारा समाज का शोषण। इस शोषण में सबकी मिलीभगत है। विद्यालय, पुस्तकालय की स्थापना से लेकर भूदान जैसे समाज कल्याण की योजनाओं के कार्यान्वयन में सर्वत्र भ्रष्टाचार का प्रकोप है। रेणु जी इसे चित्रात्मक ढंग से पात्रों और संवादों के माध्यम से उजागर करते हैं।

रिपोर्ताज का तीसरा कथा सूत्र है सेमल वन और एकलव्य जी का मुर्गी पालन। रेणु जी की पर्यावरण संबंधी चिंता, लेखकीय वृत्ति की निरर्थकता, साम्यवाद का विस्तार आदि इस प्रकरण में नाटकीय रूप से उभरे हैं।

इस रिपोर्ताज के अंतिम हिस्से में रेणु का मानवीय रूप तेज़ी से उभरता है और कुछ देर ठहर कर पाठक को हर समस्या पर सोचने के लिए विवश करता है। इसमें कोई संदेह नहीं कि रेणु का यह रिपोर्ताज उनकी श्रेष्ठ रचनाओं में से एक है और प्रभाव एवं उद्देश्य की दृष्टि से पूरी तरह सफ़ल प्रतीत होता है।

15.7 शब्दावली

जिजीविषा	:	**जीने की इच्छा**
कुक्कुट	:	मुर्गी
डिसेंट्री	:	पेचिश
बँटैयादार	:	वह व्यक्ति जिसे बँटाई में ज़मीन मिली हो। बँटैयादार खेती कर मालिक को लगान देता है।
अरज	:	याचना, मिन्नत
जिबह होना	:	काटा जाना
बावरी	:	दीवानी
आफ़ताब	:	सूरज
जरीब	:	ज़मीन नापने की जंजीर 'करीब 55 मीटर लंबी दूरी एक ज़रीब है'
टंडैल	:	कामगार मज़दूर
तनाज़ा	:	झगड़ा, विरोधी दावा
चौहद्दी	:	भूमि के चारों तरफ (हद) वाले
पुख्ता	:	ठोस, पक्की
गहो	:	पकड़ो
तसदीक	:	पुष्टि, प्रमाण
बेदखली	:	निकाल बाहर करना, ज़मीन के अधिकार से वंचित करना
फसलजब्ती	:	फसल को जब्त कर लेना
पाँखें	:	पंख
कलरव	:	शोर
नवधनाढ्य	:	नयी अमीरी वाले

15.8 बोध प्रश्नों के उत्तर

बोध प्रश्न-1

1. रिपोर्ताज की प्रमुख विशेषताएँ
   - (क) रिपोर्ताज को मर्मस्पर्शी बनाने में कथातत्व का महत्वपूर्ण योगदान होता है।
   - (ख) इसमें किसी घटना के सामाजिक, आर्थिक व राजनीतिक आयामों को कलात्मक रूप में प्रस्तुत किया जाता है।
   - (ग) छोटी-छोटी घटनाएँ महत्वपूर्ण चित्रों का रूप ग्रहण करती हैं।
   - (घ) घटनाओं का लेखक से साक्षात्कार होने के कारण रिपोर्ताज में विश्वसनीयता अधिक होती है।
2. (क) फ्रेंच
   - (ख) कला और संवेदना
   - (ग) 1936
   - (घ) रोमांचक, आतंककारी या भीषण घटना, युद्ध, अकाल, बाढ़, सूखा आदि।

बोध प्रश्न-2

1. (क) नाटक के मंचन में उच्च वर्ग और दलित वर्ग का संघर्ष
   - (ख) बिहार में ज़मीन की चकबंदी
   - (ग) सेमल वन और मुर्गा पालन

2. (क) यह उक्ति जनता में किसी व्यक्ति का है। इसका तात्पर्य है कि जो व्यक्ति शासक पार्टी से हैं, हर काम (गलत या सही) करवा सकते हैं। सरकारी अधिकारियों के नियम सब बेमानी हैं।
   - (ख) यह ब्राह्मण टोली के मंत्री जी का कथन है, जो दलित वर्ग के नाटककारों को संबोधित है। इस कथन में छल है, क्योंकि उच्च वर्ग के लोग दलितों के नाटक में घुसकर उसे छिन्न-भिन्न करना चाहते हैं।

(ग) यह छित्तन बाबू का कथन है, जो बिकू बाबू के खिलाफ है। स्वयं छित्तन बाबू पुस्तकालय को हड़पकर बैठे हैं। इस उक्ति में लेखक यह प्रकट करता है कि समाज के महारथी लूटपाट में शामिल हैं, लेकिन अपना दोष छिपाने के लिए दूसरों पर आरोप मढ़ देते हैं।

(घ) एम.ए. पास नौजवान ने सेमल के पेड़ उद्योग को न बेचने का इरादा बताते हुए हाईकोर्ट में यह अर्ज़ी दी है। इस उक्ति में लेखक की पर्यावरण संबंधी चिंता स्पष्ट हो रही है।

बोध प्रश्न-3

इस रिपोर्ताज की तीन प्रमुख अंतःकथाओं के संदर्भ में वस्तु की दृष्टि से निम्नलिखित की चर्चा कीजिए

समाज की उथल-पुथल का चित्रण। वर्ग विभेद के प्रति विद्रोह
भारतीय किसान की जिजीविषा और सहनशीलता
लोकतंत्र की प्रधानता
राजनीतिक नेताओं की पतनशीलता
पर्यावरण के प्रति सजगता
इसकी भाषा-शैली की चर्चा कीजिए।
कुल उत्तर एक पृष्ठ में हो, पूरी इकाई पर आधारित हो।